Visit **Dwarkadheeshvastu.com** For

FREE **Vastu Consultancy, Music, Epics, Devotional Videos**
Educational Books, Educational Videos, Wallpapers

———— **** ————

All Music is also available in **CD** format. **CD Cover** can also be print with your Firm Name

———— **** ————

We also provide this whole Music and Data in **PENDRIVE** and **EXTERNAL HARD DISK.**

Contact : Ankit Mishra (+91-8010381364, dwarkadheeshvastu@gmail.com)

II SHRI HARI II

SHRI VAYU PURAN

(HINDI)

२६	स्वरोत्पत्ति निरूपण	...	९९
२७	महादेव जी के शरीर का वर्णन	....	१०२
२८	ऋषियों के वंश का निरूपण	....	१०६
२९	अग्नि वंश का वर्णन	....	१०८
३०	दक्ष शाप वर्णन	....	१११
३१	देव वंश वर्णन	....	१२४
३२	युग धर्म	....	१२८
३३	स्वायम्भु वंश वर्णन	....	१३१
३४	जम्बू द्वीप का वर्णन	....	१३५
३५	,, ,,	....	१३९
३६	भुवन-विन्यास	....	१४१
३७	,, ,,	....	१४३
३८	,, ,,	....	१४५
३९	,, ,,	....	१४९
४०	,, ,,	....	१५३
४१	,, ,,	....	१५४
४२	,, ,,	....	१५८
४३	,, ,,	....	१६३
४४	,, ,,	....	१६४
४५	,, ,,	....	१६५
४६	,, ,,	....	१७१
४७	,, ,,	....	१७३
४८	,, ,,	....	१७७
४९	,, ,,	....	१७९
५०	,, ,,	....	१८६
५१	ज्योतिष्प्रचार	...	१९३
५२	,,	....	१९६
५३	ज्योतिःसन्निवेश	....	२०१
५४	नीलकण्ठ भगवान की स्तुति	....	२०७
५५	लिंगोद्भव स्तव	....	२१४
५६	पितरों का वर्णन	....	२१८
५७	स्वायम्भुव मन्वन्तर के चार युगों का वर्णन	....	२२४
५८	स्तुति नील कण्ठ	....	२२९
५९	ऋषियों के लक्षण	....	२३३
६०	महा स्थान तीर्थ में वेद शाखाओं का वर्णन	....	२३५

६१	प्रजापति के वंश का वर्णन	....	२३६
६२	पृथ्वी का दुहा जाना	....	२४४
६३	पृथु वंश का वर्णन	....	२५१
६४	वैवस्वत मन्वन्तर की सृष्टि का वर्णन	....	२५८
६५	प्रजापति के वंश का वर्णन	....	२६०
६६	कश्यप के संतानों की सृष्टि कथा	....	२७०
६७	कश्यप जो की प्रजाओं की सृष्टि	....	२८१
६८	कश्यप की सन्तानों की सृष्टि	....	२८६
६९	कश्यप की प्रजा सृष्टि	....	२९२
७०	ऋषियों के वंशों का वर्णन	....	३१७
७१	श्राद्ध की प्रक्रिया	....	३२३
७२	श्राद्ध कल्प	....	३२९
७३	,, ,,	....	३३२
७४	,, ,,	...	३३७
७५	,, ,,	....	३४७
७६	,,	....	३४४
७७	,,	....	३४८
७८	,,	....	३५७
७९	,,	....	३६२
८०	श्राद्ध में दान के फल.	....	३६९
८१	विशेष तिथियों में श्राद्ध के करने का फल	....	३७२
८२	विशेष नक्षत्रों में श्राद्ध करने का फल	....	३७५
८३	श्राद्ध में भिन्न २ समय में तृप्ति के साधन, भूत विशेष द्रव्य, गया में श्राद्ध के फल तथा ब्राह्मण की परीक्षा		३७७
८४	श्राद्ध विधि के विषय में वरुण वंश का वर्णन	....	३८८
८५	श्राद्ध के विषय में वैवस्वत मनु के वंश का वर्णन	....	३९३
८६	वैवस्वत मनु के वंश के विषय में गन्धर्वों की मूर्च्छना का कारण	....	३९५
८७	गीतों के अलकारों का वर्णन	....	४००
८८	वैवस्वत मनु के वंश का वर्णन	....	४०३
८९	,, ,, ,,	....	४२०
९०	चन्द्रमा के वंश का वर्णन	....	४२२
९१	,, ,, ,,	....	४२६
९२	,, ,, ,,	....	४३४
९३	,, ,, ,,	....	४४८

९४	कीर्तिवीर्य अर्जुन की उत्पत्ति वर्णन	....	४४६
९५	ज्यामघ का वृतान्त	....	४५४
९६	विष्णु वंश का वर्णन	....	४५७
९७	विष्णु माहात्म्य वर्णन	....	४७४
९८	,,	....	४८२
९९	तुर्वसु आदि ययाति के पुत्रों का वश वर्णन	....	४९१
१००	मन्वन्तरों का वर्णन	....	५१९
१०१	भूर्लोकादि की व्याख्या	....	५२८
१०२	प्रतिसर्ग वर्णन	....	५४१
१०३	सृष्टि वर्णन	....	५४९
१०४	व्यास की सन्देह-निवृति	....	५५४
१०५	गया माहात्म्य	....	५६०
१०६	,,	....	५६४
१०७	,,	....	५७२
१०८	,,	....	५७७
१०९	,,	....	५८४
११०	,,	....	५८९
१११	,,	....	५९२
११२	गया माहात्म्य (इति)	....	५९८

हर प्रकार की धार्मिक पुस्तकें मिलने का पता—

ला० श्यामलाल हीरालाल श्याम काशी प्रेस मथुरा।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

॥ श्री पुराण पुरुषोत्तमायनमः ॥

श्री वायु महापुराण

का

भाषानुवाद

प्रक्रिया-पाद

प्रथम अध्याय

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जय मुदीरयेत् ॥

श्रीमान् भगवान नारायण एवं नरोत्तम नर तथा देवी सरस्वती और व्यासजी को नमस्कार करने के बाद जय(वायु पुराण)को कहना चाहिये । सत्यवती के हृदय नन्दन, पाराशर के पुत्र श्री भगवान व्यास जी की जय हो, जिनके मुख रूपी कमल से यह अमृतमय समस्त वाङ्मय निकला है उसको सारा संसार पान करता है ।

समस्त जगत के पति, ईशान, नित्य, अचल, अविकारी महात्मा महादेव, लोक कर्ता, सर्वज्ञ, अजित एवं भूत, भविष्य और वर्तमान के प्रभु सबके पति परब्रह्म की मैं शरण में जाता हूँ । जिन जगदीश्वर के अनुपम ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य तथा धर्म साथ ही साथ सिद्ध हैं, जो इन सत् असत् रूप समस्त पदार्थों का पालन करते हैं, जिनमें सभी पदार्थ उत्पन्न होनेके लिये प्रवेश करते हैं तथा जो भुवन भावन, लोकके तत्व को जानने वाले, भगवान योग के बल से स्थावर जंगम और समस्त प्राणियों की सृष्टि करते हैं । पुराण की कथा जानने की इच्छा से मैं उन्हीं अजन्मा, सब कार्य करने वाले, लोक साक्षी जगत्पति शंकर भगवान की शरण में जाता हूँ ! श्री ब्रह्माजी, इन्द्र, वायु, महर्षि

वशिष्ठ और उनके दौहित्र-परम कीर्तिमान जातुकर्ण्य, पुण्यआत्मा श्रीकैष्णापायन व्यास आदि को नमस्कार करके, धर्म अर्थ, काम और मोक्ष से पूर्ण, शास्त्रों से विभूषित, वेदों के समान, ब्रह्मा जी के द्वारा कहे गये वायु पुराण की कथा को अब मैं एकाग्र चित्त होकर कहूंगा।

जिस समय अनुपम कान्ति वाले, अमित पराक्रमी, श्रेष्ठ राजा असीम कृष्ण इस पृथ्वी का धर्म पूर्वक शासन करते थे, उस समय पुण्य जल वाली दृषद्वती नदी के पवित्र तट पर धर्म क्षेत्र कुरुक्षेत्र में सरल, शान्त, दान्त जितेन्द्रिय, रजोगुण से रहित, सत्यव्रती ऋषियों ने एक महान यज्ञ किया। शास्त्र की विधि से उन नैमिषारण्य वासी ऋषियों की दीक्षा हुई थी। वहां उनके दर्शन करने के लिये महाबुद्धिमान पौराणिक प्रवर सूत आये। उनके सुभाषित वचनों को सुन श्रोताओं को रोमांच हो जाता था अतः इस संसार में इस कर्म के अनुसार उनका लोमहर्षण नाम प्रसिद्ध था। वे तपस्या, विद्या तथा आचार के निधान श्री वेद व्यास के बड़े प्रतापी शिष्य थे, तीनों लोकों में उनकी बड़ी प्रसिद्धी थी। समस्त पुराणों, वेदों तथा महाभारत को बढ़ावादेने वाली शक्तिमयी वाणी उनमें विद्यमानथी। जिस प्रकार पृथ्वी में औषधियां भरी हुई हैं उसी प्रकार उनमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की कथायें, सूक्तियां एवं परिभाषायें भरी पड़ी थीं नीति मेधावी सूतजी ने मुनिवरों के पास पहुँचकर नियम से सादर हाथ जोड़ नमस्कार किया और उनको अपनी नम्रता से सन्तुष्ट किया। ये परम तेजस्वी यज्ञकर्ता मुनिगण सदस्यों के साथ बहुत प्रसन्न हुये और यथायोग्य उनकी प्रशंसा और पूजा की गई। उस समय मुनियों के मनमें पुराण सुनने की इच्छा प्रकट हुई।

उस यज्ञ का गृहपति समस्त शास्त्रों का ज्ञाता था उसने परम बुद्धिमान लोमहर्षण को देखकर तथा उन ऋषियों के इङ्गित से उनके मनोभावों को समझकर सूत जी से कहा-"सूतजी! आपने इतिहास और पुराण के निमित्त ब्रह्मज्ञ-वरिष्ट मेधावी व्यास की बड़ी उपासना की है और उनकी बुद्धि से आपने पुराणों की कथा का दोहन कर लिया है।

हे सूक्ष्मबुद्धि ! इन ऋषियों को पुराण सुनने की बड़ी इच्छा है। अतः आपको एवं आपको सुनाना चाहिये। ये सब विभिन्न गोत्रों के महात्मा यहां आये हुए हैं। अपने २ वंशों को पुराणों के द्वारा ये सुनलें। ये लोग इस महान यज्ञ में पुत्रों सहित यहां आये हुए हैं इन्हें प्रसंग की कथायें सुनाइये। यज्ञ की दीक्षा लेने के पूर्व हम लोगों ने आपका स्मरण किया है। ऋषियों तथा गृहपति के इस प्रकार प्रार्थना करने पर लोमहर्षण सूतजी मधुर शब्दों में न्याययुक्त कल्याणकारी वाणी बोलने लगे।

सूतजी ने कहा—ऋषिवृन्द ! आप लोग स्वयं पुराण जानते हैं और सत्यव्रत का पालन करते हैं। आप लोगों ने जो मुझे पुराण सुनाने की प्रेरणा दी है उससे मैं अत्यन्त पवित्र हो गया हूँ। मेरे ऊपर यह आपने महान कृपा की है। प्राचीन काल में श्रेष्ठ लोगों ने यही अपना धर्म बताया है कि सूत का कार्य यह है कि वह इतिहास पुराणों में बताए हुए देवताओं, ऋषि-मुनियों तथा अमित तेजस्वी राजाओं की वंशावली और महात्माओं की सुनी हुई बातों को धारण करें। सूतों का वेद में कोई अधिकार नहीं है। राजा बेन के पुत्र पृथु के यज्ञ के अवसर पर सर्व प्रथम सुत्यों (अर्थात यज्ञीय औषधियों के कहते समय) सूतजी की उत्पत्ति हुई। इस यज्ञ में इन्द्र को दिए जाने वाले हव्य के साथ गुरु वृहस्पति के हव्य से मिलने से वह आहुति इन्द्रदेव को भूल से देदी गई इस कारण इससे उत्पन्न सूत को वर्णसंकर की संज्ञा दी गई। वेदों में सूत का कोई अधिकार नहीं बताया है। और अन्य कार्यों में प्रायश्चित भी बताया है। शिष्य के हविष्य के साथ मिलने से गुरु के हविष्य का अनादर हुआ। अतः हविष्य की गलती के कारण सूत की वर्णसंकर संज्ञा हुई। सारथि की जीविका अर्थात रथ, हाथी घोड़ों के परिचालन का काम तथा चिकित्सा करना आदि ही उनके धर्म हैं। क्षत्रिय से ब्राह्मण योनि द्वारा पैदा होने पर सूत साधर्म्य से क्षत्रिय धर्म के तुल्य धर्म वाले कहे गये हैं। आज जब आप सबने मुझसे मुनियों के द्वारा पूज्य पुराण की कथा पूछी है तो भला मैं उसे आपसे क्यों न वर्णन करूँ?

षिल्हीश्वरों की मावसी कन्या थी जिसका नाम 'वासवी' था। पितरों ने उसको शाप दे दिया। जिससे वह मत्स्य योनि में उत्पन्न हुई। उसी के गर्भ से श्रेष्ठ महायोगी व्यास जी ने इस प्रकार जन्म धारण किया जिस प्रकार अग्नि के जन्म का निमित्त लकड़ी होती है उन्हीं भृगु मुनि के पथ पर चलने वाले ब्रह्मस्वरूप पुराण पुरुष, श्री विष्णु भगवान और श्री वेद व्यास को नमस्कार करके कथा को कहता हूं। जिन भगवान व्यासदेव के जन्म लेते की समस्त संग्रहों के साथ वेद स्वयं उपस्थित हो गये? जिन्होंने महाभारत जैसा ग्रन्थ अपनी बुद्धि से संसार में चन्द्रमा के समान प्रकाश फैलाया। जिसको प्राप्त कर वेद वृक्ष शाखाओं के साथ वैसे ही शोभायमान हुआ जैसे भूमि, काल और गुणों को पाकर पेड़ों में अनेक टहनियां फूटती हैं। उन सर्वज्ञ समस्त वेदों में पूजित, तेजस्वी, ब्रह्मचारी व्यासजी से मैंने जो पुराण सुना उसे मैं आज आप लोगों को सुनाऊँगा। जिसको प्राचीन कालमें नैमिषारण्य के निवासी ऋषिगणों के पूछने पर वायुदेव ने कहा था। उस वायु पुराण की पावन कथा को मैं कहूँगा।

भगवान महेश्वर, पर, अव्यक्त, चतुर्बाहु, चतुर्मुख, अचिन्त्य, अप्रमेय स्वयंभू, ईश्वर हैं जो सबके हेतु हैं। सत असत रूप, नित्य अव्यक्त, कारण हैं। वे महत तत्व से लेकर विशेष तत्व तक की सृष्टि करते हैं। सबसे पहले हिरण्य, अंड उत्पन्न हुआ। अंड जलसे उत्पन्न हुआ, जलसे तेज, तेज वायु से और वायु आकाश से, आकाश भूतादि से, भूतादिमहत तत्वसे, और महत तत्व अव्यक्त से ढँकाथा, सबसे पहले यहां इसी का वर्णन है इसके बाद यहां समस्त देवताओं तथा ऋषियों का वर्णन है। नदियों, पर्वतों की उत्पत्ति बतायी गयी है और मन्वन्तरों की तथा कल्पों की भी चर्चा है। ब्राह्मण और क्षत्रियों की कथा और ब्राह्मण जन्म बतलाया गया है। फिर ब्रह्मा से सृष्टि के होने तथा प्रजासर्गकी बात है। अव्यक्त जन्म वाले ब्रह्माकी अवस्थायें कल्पों के वर्ष तथा जगत की स्थापना कही गई है। यहां भगवान का शयन तथा पृथ्वी का उद्धार करना, वर्ण और आश्रय के विभाग के साथ २

पुर नगर आदि की संनिवेश स्थापना गृहों के वृत्त तथा सिद्धियों का विनाश मार्ग माप या मार्गों का विस्तार पूर्वक वर्णन है।

पुण्यात्मा पुरुषों के स्वर्ग में अलग अलग स्थान वृक्षों औषधियों और लताओं का कीर्तन यहां है पापी मनुष्यों का मरने पर वृक्ष, नारकीय कीट होना तथा देवताओं और ऋषियों की दो प्रकार की गति बताई गई है। अन्नादि शरीरों की सृष्टि उनको त्यागना तथा ब्रह्मा ने सब शास्त्रों के पहले पुण्य का स्मरण किया, तब उनके मुख से वेद वेदाङ्ग तथा धर्मशास्त्र निकले। व्रत और नियम पशु एवं पुरुष की उत्पत्ति का वर्णन उनकी व्याख्या कल्प के साथ वर्णित है। फिर बारह धर्म जो बार बार प्रजा कल्प में ब्रह्मा के अंगों से उत्पन्न होते हैं वह बताये गये हैं। फिर ब्रह्मा के बुद्धि पूर्वक नव सर्ग फिर तीन और बुद्धि पूर्वक सर्ग, नव लोकोंकी सृष्टि, दो कल्पोंका अन्तर। पुनः प्रतिसर्ग तमोगुण से ढकने के कारण ब्रह्मा से अधर्म की उत्पत्ति और उसके बाद शतरूपा का वर्णन प्रिय व्रत और उत्तानपाद तथा प्रसूत और आकूति जिनसे सृष्टि बढ़ी जिनके याद करने से लोग पवित्र हो जाते हैं—जिनमें लोक विद्यमान हैं उनका वर्णन है रुचि और प्रजापति दोनों की उत्पत्ति के बाद फिर आकूति से मैथुनादिक सृष्टि प्रसूतिसे दक्षकी लड़कियों का जन्म। श्रद्धा आदिसे महात्माओं की उत्पत्ति बताई गई है। सात्विक धर्म की सुखमयी तथा अधर्म की अशुभ तथा हिंसामयी सृष्टि का वर्णन है। सती में महेश्वर की प्रजा सृष्टि और वैसे ही ब्रह्म का कीर्तन किया गया है। मोक्ष की इच्छा रखने वाले ब्राह्मणों के लिये योगीश्वर ने योगब्रह्म बतलाया है एवं रुद्र के भाग्यशाली अवतार का वर्णन है। तीनों वेदों की कथा, ब्रह्मा और नारायण उत्तम सम्वाद तथा वहां स्तोत्रका भी वर्णन है। इन दोनों की स्तुति से देवेश भगवान शिव सन्तुष्ट हुए और महात्मा रुद्र का ब्रह्मा के शरीर में प्रकाश हुआ महात्मा रुद्र क्यों रोये उसका तथा रुद्र आदि आठों नाम स्वयम्भू के क्यों पड़े उसका कारण बतायागया है। साथ ही साथ इस समय पर अपने को उन्होंने कैसे व्याप्त कर लिया।।

भृगु आदि ऋषियों के प्रजासर्ग का वर्णन है। ब्रह्मर्षि वशिष्ठ के गोत्र का वर्णन तथा अग्नि का स्वाहा से प्रजासर्ग वर्णित है। पितृ-वंश के प्रसङ्ग में दो प्रकार के पितरों तथा फिर स्वधा का वर्णन है। महेश्वर का सती के लिए दक्ष तथा श्रीमान भृगु आदि के प्रति शाप तथा विचित्रकर्मा दक्ष का रुद्र को प्रति शाप देना वर्णित है। दोष दिखाकर वैर का बदला देना, मन्वन्तर के प्रसंग से काल का ज्ञान वर्णित है। कर्दम प्रजापति की शुभ लक्षणों वाली कन्या तथा प्रियव्रत के पुत्रों का विस्तार बतलाया है। इसके बाद वे सब अलग अलग किन किन द्वीपों और देशों में भेजे गये तथा फिर स्वायम्भुव सर्ग का वर्णन है। नाभि तथा महात्मा रजस का सर्ग एवं समुद्रों, द्वीपों और पर्वतों का वर्णन, वर्षों नदियों तथा उन सबके भेदों तथा सातों दीपों के सहस्रों भेद और उपभेद बताये गये हैं। जम्बूदीप और समुद्र के विस्तार तथा उनके मन्डल तथा पर्वतों के साथ योजन मान से उनका चिन्ह बताया गया है। हिमवान हेम कूट निषध, मेरु, नील, श्वेत और शृंगवान ये वर्ष पर्वत कहाते हैं। इनकी लम्बाई चौड़ाई और ऊँचाई तथा इनके बीच के विष्कमों का परिमाण योजनों में दिया गया है। तथा इनमें निवास करने वालों का भी वर्णन है। भारत वर्ष चल, अचल, नदियों पर्वतों तथा प्राणियों से भरा है। जम्बूद्वीप सात समुद्रों से घिरा है और उसके बाद जलमयी पृथ्वी तथा लोकालोक का वर्णन है। ब्रह्माण्ड के बीच से भू आदि लोक तथा सातों द्वीपों वाली भूमि अपने अपने आकारों के साथ है। इन सबों में जो बड़ा है उनका परिमाण इनके व्यासों के चिन्ह के साथ छोटे रूप में लिखा है। सूर्य तथा चन्द्रमा और पृथ्वी का भी मान सैकड़ों योजन में दिया है। मानस के उत्तर शिखर पर इन्द्र आदि की पुण्य सभायें तथा उनके बाद आतात चक्र की तरह स्वर्ग की चाल बतायी है। नागवीथी तथा अजवीथी के निशान बनाकर योजनों में मण्डलों की काष्ठा और लेखाओं का मान बताया है।

लोकालोक, संध्या, दिन और विषुवत् का भी वर्णन है। पुनः

चारों दिशाओं में लोकपालों के रहने की बात है। पितरों और देवताओं के दक्षिण और उत्तर मार्ग रजोगुण और सत्वगुण के आश्रय से गृहस्थों तथा सन्यासियों के कर्म बताये गये हैं श्री विष्णु का धाम जहां धर्म रहते हैं। सूर्य और चन्द्रमा तथा ग्रह और नक्षत्रों की चाल बताई गई है। ध्रुव के हिम्मत से प्रजाओं का शुभ अशुभ तथा किसी कारण वश ब्रह्मा के बनाये हुये सूर्य के रथ का वर्णन है। जिस रथ से स्वय भगवान आकाश में चलते हैं और जिस पर देवताओं ऋषि गन्धर्व, अप्सरायें ग्रामणी सांप और राक्षस आदि निवास करते हैं उनका वर्णन है और गन्धर्व अप्सरागण तथा ग्रामीण सांप और राक्षसों के साथ जल के सार रूप चन्द्रमा का वर्णन है। सूर्य के कारण चन्द्रमा की वृद्धि और क्षय होना तथा ध्रुव के साथ सूर्य के रथ का वर्णन है। फिर उस शिशुमार का वर्णन है। जिनकी पूँछ में ध्रुव की स्थिति है। पुनः ग्रहों के साथ तारारूप समस्त नक्षत्रों का वर्णन है। सूर्य की हजारों किरणों से वर्षा, शीत तथा धूप का झरना और उनमें पुण्य आत्मा वाले देवताओं के निवास स्थान बताये गये हैं। नाम कर्म, तथा अर्थ के मतलब से किरणों का हिस्सा तथा सूर्य की अपेक्षा से ग्रहों की चाल और मान बताया गया है। ब्रह्मा की स्तुति से खुश होकर विषपान करने वाले श्री शम्भू भगवान का कन्ठ शीघ्र विष से नीला कैसे होगया, उसका भी वर्णन है। देवताओं ने विष्णु की प्रार्थना की और उन्होंने भगवान महादेव की प्रार्थना की तब सब पापों के नाश करने वाले लिङ्ग की पावन कथा का वर्णन किया गया है।

विश्व रूप भगवान शिव की यह प्रथम प्रकृति का विचित्र परिमाण तथा पुरखा के महात्म्य का वर्णन है। उसने दोनों प्रकार के पितरों का अमृत के द्वारा तर्पण कैसे किया तथा पर्व और उनकी सन्धियों का वर्णन है।

स्वर्ग लोग में पहुँचे हुये प्राणियों का वर्णन तथा उनकी अधोगति का वर्णन, दोनों प्रकार के श्राद्धों का वर्णन तथा उनसे महान

कल्याण होने का वर्णन, युगों की संख्या माना सृत्यु युग तथा त्रेता युग में अपकर्ष के कारण, वर्ण और आश्रमों का वर्णन, इसमें सविस्तार किया गया है। वसु और उसकी अधोगति का वर्णन, स्वायंभू मनु को छोड़ तपस्या की बड़ाई तथा सभी युगों की अवस्थाओं का वर्णन है। कलि और द्वापर युगों का संक्षिप्त वर्णन, युगों के देवता पशु, पक्षी, और मनुष्यों का वर्णन है। युग के सामर्थ्य से आयु और पतन तथा शिष्ट आदि की उत्पत्ति का वर्णन है। मन्ना और ब्राह्मण के विचार ईश्वर, ऋषि, मनु, तथा पितरों के लक्षण बताये हैं। वेद और उनके अंगों का वर्णन तथा शाखाओं की गिनती तथा वेदव्यास इत्यादि बातों का वर्णन है॥ मन्वन्तरों का ह्रास, ह्रास के बाद देवता, ऋषि मुनि और पितरों की उत्पत्ति का वर्णन है। मनुष्य की गिनती से मन्वन्तर का संख्या भी बताई गई है। अतीत और वर्तमान सभी मन्वन्तरों का वर्णन किया गया है।

तीनों मन्वन्तरों, उनके अवसान तथा उनके देवताओं और प्रजापतियों का वर्णन भी किया गया है। दक्ष प्रजापति के दौहित्र, जिनको विद्वान दक्ष ने ही ब्रह्मा द्वारा उत्पन्न कराया था का वर्णन, सार्वणी आदि मनु जो सुमेरु आदि पर्वतों पर रहने वाले हैं, का वर्णन किया गया है। फिर उत्तानपाद और ध्रुव की प्रजा सृष्टि का वर्णन है।

वेन के पुत्र पृथु से पृथ्वी का दोहन, पात्रों और दूधों तथा वंशों का वर्णन है। इसके पहले भी इस पृथ्वी का दोहन ब्रह्मा आदि दश प्रचेताओं ने किया था फिर साम के अंग से मारिष में श्रीमान् प्रजापति दक्ष की उत्पति का वर्णन है और इन्द्र के भूत भविष्य तथा वर्तमान के शासक होने का वर्णन है। मनु आदि तथा वैवस्वान मनु की भी प्रजा सृष्टि का वर्णन है। वारुण शरीर धारी महादेव के यज्ञ में ब्रह्मा के वीर्य से भृगु आदि का उत्पति बताई गयी है। चाक्षुष मनु के शुभ प्रजासर्ग हो जाने पर वैवस्वत मन्वन्तर में दक्ष की ध्यान से की गई सृष्टि का वर्णन है। ब्रह्मा के पुत्र प्रियंवद नारद

ने स्वयं शाप पाने के लिए दक्ष के महाबली पुत्रों का विनाश किया तब दक्षने वीरिणी में ही प्रसिद्ध कन्याओं की उत्पत्तिकी। फिरमतिमान कश्यप की धर्म सृष्टि का वर्णनहै। इसके बाद ब्रह्मा, विष्णु और शिव के एक ही तथा अलग अलग होने तथा उनकी परस्पर विशेषता की बात है। स्वायम्भू ने देवताओं को शाप देकर कैसे ईशत्व से निकाल दिया तथा मरुतों को कैसे मरुत होने का वर मिला तथा दिति से देवताओं की उत्पत्ति का वर्णन है। उनंचास मरुतों तथा पिता के वाक्य से उनको देवता होना एवं वायु के कन्धे पर रहना बतलाया गया है। दैत्य दानव, गन्धर्व, उरग, राक्षस तथा सभी भूत, पशु, पक्षी एवं लताओं तथा अप्सराओं की उत्पत्ति बड़े विस्तार से बताई गई है समुद्र के संयोग से ऐरावत हाथी के जन्म की कथा है। गरुड़ की उत्पत्ति और उसकी पूजा का एवं भृगु तथा अंगिरा गोत्र वालों का बताया गया है। वहीं कश्यप, पुलस्त्य, महात्मा अत्रि तथा पराशर मुनि की प्रजाओं का भी वर्णन है। इसके बाद देवताओं और ऋषियों की प्रजाओं की उत्पत्ति का वर्णन है तीन कन्याओं का वर्णन है जिनमें सारे लोक विद्यमान हैं। देवताओं के पिता और दौहित्र बताये गये हैं। तथा देवों की उत्पत्ति पांचों महात्माओं और भगवान के भक्त तुम्हारे जन्म का विस्तार पूर्वक वर्णन है। इला का वर्णन फिर आदित्य का तब विकुक्षि का चरित और धुन्धु का विनाश है। संक्षेप में इक्ष्वाकु से लेकर बृहद्बल पर्यन्त तथा निमि से लेकर जन्हुगण तक राजाओं का, नृपति ययाति एवं यदुवंश तथा हैहयवंश का वर्णन है। इसके बाद क्रोष्टा के वंश का वर्णन तथा ज्यामघ का महात्म्य तथा उनके प्रजासर्ग का वर्णन है। देवावृध अर्क महात्मा वृष्णि के वंश तथा विष्णु का दिव्य वर्णन है। महामति विवस्वान् को मणिरत्न की प्राप्ति तथा महात्मा युधाजित को प्रजा सर्ग कहा गया है। राजर्षि देवमीढुष के जन्म चरित और वंश वर्णन है। कंस की दुष्टता तथा प्रजापति विष्णु वासुदेव का देवकी के गर्भ से अकेले में जन्म लेने की कथा है। इसके बाद विष्णु के प्रजासर्ग

का वर्णन तथा देवासुर के उत्पन्न होने पर विष्णु स्त्री वध करके शुक्र की प्राण रक्षा करने पर भृगुजी का शाप मिलना तथा भृगु का शुक्र की माता के उठाने की कथा का वर्णन है। देवताओं और असुरों के बारह अनोखे नारसिंह आदि प्राण नाशक लड़ाई का किस्सा है। वीर शुक्र ने तपस्या द्वारा शिव की आराधना तथा वरदान के लोभ से उनकी स्तुति की देवताओं और राक्षसों के काम तथा जयन्ती के साथ महात्मा शुक्र के आसक्त होने पर बुद्धिमान बृहस्पति ने शुक्र का रूप धारण करके राक्षसों को मोहित किया और तेजस्वी शुक्र ने असुरों को शाप दिया। इसके बाद विष्णु का महात्म्य तथा विष्णु के जन्म की कथा है पुनः शुक्र की पुत्री देवयानी से यदु के तुर्वसु उत्पन्न। ययाति के पुत्र अनुद्रुह्यु तथा पुरु राजा हुए। वहां उनके वंशज जो श्रेष्ठ महात्मा नरेन्द्र बहुत धन और तेज वाले हुये। उनका पूरा २ हाल तथा विप्रषि कुशिक के धर्म पालन का वर्णन है। बृहस्पति के शाप को सुरभि ने हटाया फिर जन्हु वंश कीर्त्तन तथा शांतनु के वलवीर्य की कथा है। भविष्य में होने वाले राजाओं तथा सात मनुष्यों का वर्णन है। अन्त में कलियुग के खत्म (क्षीण) करने पर पृथ्वी का संहार बताया गया है तथा परार्ध्य और पर के लक्षण कहे हैं। योजन में ब्रह्मा के परिमाण का वर्णन किया गया है तथा नैमित्तिक प्राकृतिक तथा आत्यन्तिक तीन प्रकार के प्रलय समस्त भूतों के बताये गये हैं। फिर सूर्य से अवर्षण होने तथा घोर संवत्क अग्नि का किस्सा कहा है। एकार्णव मेघ, वायु तथा महात्मा परमात्मा की रात्रि का वर्णन है। विशेष कर ब्रह्मकाल संख्या का लक्षण बतलाया है फिर भू आदि सात लोकों का और पापियों के रौरव आदि नरकों का वर्णन। ब्रह्मलोक के ऊपर शिव का उत्तम स्थान है वहीं प्रलय में समस्त भूतों का संहार होता है। फिर सब जीवों के परिणाम निर्णय तथा ब्रह्मा के प्रलय में सबके संहार का वर्णन है। फिर आठ प्रकार के आठ प्राण बताये गये हैं, एवं धर्म और अधर्मके आश्रयसे ऊर्ध्व एवं अधः गतियों का वर्णन है। महान भूतों का भी प्रत्येक कल्प में

क्षय और तथा दुखों को बताकर ब्रह्मा की भी अनित्यता बताई है। योगी के दोष तथा उसके परिणाम का निश्चय तथा मोक्ष को दुर्ग-लता तथा वैराग्य से दोष देखने की बात कही है। व्यक्त और अशक्त को त्यागना केवल ब्रह्म में स्थिति तथा नानात्व के दर्शन से स्वच्छ होकर सब जीव सत्व के परे जाता है तब वह तीनों नामों से अतीत रूप से रहित नामक निरंजन ब्रह्म का आनन्द कहलाता है। फिर वह किसी से डरता नहीं। फिर पहले जैसी दूसरे ब्रह्मा की सृष्टि तथा सब पापों को नाश करने वाले ऋषियों के वंशका वर्णन है। पुराण का पूरा वर्णन करके जगत् के सभी प्रलयों और विकारों की कथा है। फिर जीवों की प्रवृत्तियों तथा निवृत्तियों के फल एवं वशिष्ठ के प्रादुर्भाव और शक्ति के जन्म का वर्णन है। पुनः विश्वा-मित्र के द्वारा सौदास से उनका निरादर तथा प्रभु पराशर की उत्पत्ति तथा उनका अन्तर्धान का वर्णन है। पितरों की कन्या से व्यास मुनि के जन्म की कथा तथा पुत्र के सहित शुकदेव के पैदा होने की कथा। पराशर का विश्वामित्र से वैर कैसे हुआ तथा विश्वामित्र के वध की इच्छा से वशिष्ठ ने अरण तैयार की उसे दैवविधि से विश्वामित्र के हितैषी मतिमान् विभुकन्द ने सन्तान की तरह उसका लालन पालन किया। फिर भगवान व्यास ने एक चतुष्पाद वेद को चार भागों में अपनी बुद्धि से कैसे विभाजन किया। इन सबकी कथा का वर्णन है। तत्पश्चात्य उनके शिष्यों ने शाखाका वर्णन किया। षडगुणीय प्रयोगों से स्वयंभू प्रभू ब्रह्माने धर्म की इच्छासे पुण्य प्रदेश पाने की इच्छा करने वाले मुनियोंकी पूछतांछ करनेपर उनकी हितसे सुन्दर नाभि वाला दिव्य रूप नामकशुभ विक्रम अनुत्तम वर्तमान चक्रको बताकर कहा कि आल-स्य छोड़ दृढ़ता पूर्वक पीछे चले जाओ तब कल्याण प्राप्त होगा। जाते जाते जहां इस धर्म चक्र की नेमी (रुकजाय) हो जाय उसी को पुण्य देश समझना और ऐसा बताकर फिर ब्रह्मा अदृश्य होगये

गङ्गा के गर्भ तथा नैमिषेध का वर्णन कर बताया है कि मुनियों ने नैमिषारण्य में यज्ञ किया । शरद्वान के मरने पर नैमिषारण्य के ऋषियों ने बड़ी श्रद्धा से उसका निवारण किया । उसे इस पूरी पृथ्वी का राजा बनाकर ले आये और विधि पूर्वक शास्त्र की मर्यादा से उनका आदर सत्कार किया । जब विधि पूर्वक अतिथि सेवा से राजा प्रसन्न हुआ तो उसको छिपकर क्रूर राक्षस स्वर्भानु (राहू) ने हर लिया । प्राचीन समय में जैसे ऋषियों के हरे जाने पर भी गन्धर्वों के साथ कलाप ग्राम में रहने वाले राजा ऐड़ के पीछे गये और यज्ञ में ऋषियों के साथ उनका मिलना वर्णित है । महात्मा मुनियों के यज्ञ में सब वस्तु स्वर्णमयी देखकर उस बारह वर्ष में होने वाले नैमिषारण्य के ऋषियों का उस रात में कैसे झगड़ा हुआ और ऐड़ को उन्होंने कैसे स्थापित किया । यह सब वर्णन है । वनमें ऐड के पुत्र आयुध को पैदा कराके उस यज्ञ को समाप्त करके आयुध की स्तुति की । हे ऋषि श्रेष्ठो ! यह सब जैसे-जैसे हुआ, बताया गया है । एवं यहां ऋषियों का परम, सर्वोत्तम लोकत्व भी वर्णित है । पहले समय में जो उत्तम ज्ञानपुराण पुराणब्रह्म ने कहा था और द्विजों पर अनुग्रह करके जो रुद्र का अवतार हुआ तथा पाशुपत योग एवं स्थान और लिङ्ग की पैदा होने की कथा तथा महादेव का नीला कण्ठ कैसे हुआ यह सब बताया गया है । यहां ब्रह्मवादी वायु ने विप्रों से सब पापों को नाश करने वाले तथा धन यश और आयु देने वाले इस महापुराण को कहा है । इस पुराण का श्रवण कीर्तन और विशेष रूप से धारण ही फलदायक है इसी क्रम से यह पुराण कहा जाता है । लम्बी बात भी थोड़े में ही कहने पर समझ में आ जाती है इसलिये सबसे पहले छोटे रूप में कहकर फिर पीछे से बड़े ढंग में आजाती है इसलिये सबसे पहले छोटे रूप में कहकर फिर पीछे से बड़े ढंग में कही जायगी । जो जितेन्द्रिय इस पाद को भली भांति पढ़ लेता है उसने इस समस्त को पढ़ लिया इसमें संशय नहीं । जो द्विज अङ्गों और उपनिषदों के साथ चारों वेदों को जानता है । किन्तु पुराण नहीं जानता वह चतुर

नहीं हो सकता। वेद को इतिहास और पुराण द्वारा बढ़ावा देना चाहिये, वेद थोड़ी ही विद्या से डरता है कि यह मुझे मार डालेगा, अर्थात् अर्थ का अनर्थ कर देगा। साक्षात् स्वायम्भू ने इस अध्याय को कहा है जो इसको पढ़ता है उसकी आई हुई सभी मुसीबतें दूर हो जाती हैं और अच्छी गति उसे मिलती है यह पुरा (पहले) अनन (अर्थात् प्राणन) करता है इसलिये इसे पुराण कहते हैं। जो इसकी आकृति को जानताहै वह सब पापों से छूटजाता है। इस समस्त संसार में नारायण व्याप्त रहते हैं। उस जगत की सृष्टि करने वाले की भी सृष्टि करने वाले देवाधिदेव महादेव हैं। अतः ये बातें थोड़े में ही कही गयी हैं कि वह समस्त पुराण महेश्वर हैं। सर्ग काल में यही शिव सृष्टि करते और संहार काल में प्रलय करते हैं।

इति श्री वायु महापुराण का प्रक्रिया पाद में अनुक्रमणिका कथन नाम का पहला अध्याय समाप्त ॥ ॥३॥

दूसरा अध्याय

[द्वादश वार्षिक सर्ग निरुपण]

ऋषियों ने सूतजी से कहा—"उन विचित्रकर्ण ऋषियों का यज्ञ कहां हुआ ? कितना समय लगा ? और किस प्रकार यह यज्ञ पूरा हुआ ? वायुदेव ने उन ऋषियों को कैसे पुराण सुनाया ? यह सब पूरे रूप में बतलाइये। हम लोगों को बड़ा सोच हो रहा है। ऋषियों के इस प्रकार पूछने पर सूतजी मधुर वचन बोले "उन धीर मुनियों ने जहां उत्तम यज्ञ किया, जितना समय उसमें लगा तथा जिस प्रकार पूरा हुआ, ये सारी बातें आप लोग सुनाइये।"

जहां विश्व की सृष्टि की इच्छा से प्राचीन काल में विश्व के सृष्टि करने वालों ने हजारों वर्ष तक पवित्र यज्ञ किया था, जिस यज्ञ में तप ही यजमान और ब्रह्मा स्वयं ब्रह्मा हुए थे, जिसमें इला ने पत्नी तथा बुद्धिमान तेजस्वी मन्यु ने शामित्र का कार्य किया था। महात्माओं के उस सत्र में जहां देवों ने हजारों वर्ष तक यज्ञ किया था, जहां घूमतेर घूमचक्र की नेमिविशीर्ण होगई और इसीलिये जिस मुनि पूजित प्रदेश का नाम नैमिष पड़ा। जहां सिद्धों और चारणों से सेवित गोमती है,जहां रोहिणी से सौम्य नामक सुत उत्पन्न हुआ, जहां महात्मा वशिष्ठ तथा अरुन्धती के अति तेजस्वी सौ पुत्र पैदा हुये, जिनमें शक्ति बड़ा था, जहां शक्ति ने कल्माषपाद रिषि को शाप दिया, वशिष्ठ का पराभव बना रहा, वहां उस नैमिषक्षेत्र में उन ब्रह्मवादियों ने यज्ञ किया। इसीलिये ये ऋषि नैमिषेय कहे जाते हैं यहीं पर विश्वामित्र और वशिष्ठ में वैर हुआ, जहां अदृश्यन्ती में पराशर मुनि ने जन्म लिया तथा जिनके जन्म लेने पर भी वशिष्ठ का पराभव बना रहा। जहां पर उन महामति मुनियों का वह सत्र विक्रमशाली भूपाल पुरुखा के शासन काल में बारहवर्ष तक हुआ। राजा पुरुखा यद्यपि अठारह समुद्र के द्वीपों का उपभोग कर रहा था, किन्तु हमने सुना है कि रत्नके लोभ से वह सन्तुष्ट नहीं हुआ। देवहूति की प्रेरणा से उर्वशी ने उससे विवाह किया और स्वर्ग की अप्सराके साथ उसने उस सबको नष्ट करनेका उपाय किया परंतु उस नरपति के शासन कालमें ही नैमिषेयों ने सत्र संपन्न किया। प्रदीप्त तेज वाले पावक गंगा ने जो गर्भ प्रसव किया उस उल्वको पर्वत पर रखागया। जो सोनाहो गया। तब उन अतुल तेजस्वी महात्माओंकी यज्ञशाला स्वयं बृहस्पति देव विश्वकर्मा ने भगवान का स्मरण कर सोने की बनादी। एक दिन शिकार खेलते २ ऐल पुरुखा वहां पहुँचा और सोने की बनी उस यज्ञशाला को देखकर उसे बड़ा अचम्भा हुआ। लोभ से उसकी बुद्धि मारी गई और उसने उसे लेना चाहा तब नैमिषेय ऋषि राजा पर बहुत रुष्टहुये और क्रोध में आकर दैववश उन मनीषी मुनियों ने उस राजा को रात बीतते २ कुशवज्रों से मार डाला। कुशवज्रों से चूर्ण होकर

महीपति ने शरीर छोड़ दिया। तब उर्वशी से उत्पन्न उसके पुत्र को पृथ्वी पर नरपति बनाया । उसी महात्मा को नहुष का पिता कहा जाता है। उस धर्मात्मा राजा ने उन ऋषियों से अच्छा बर्ताव किया उस राजा की आयु और स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। वह स्वयं बड़ा ही सज्जन था। उस राजा को प्रसन्न कर ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ उन मुनियों ने धर्म की वृद्धि के लिये विधिवत् सत्र को शुरू किया। उन महात्माओं का वह यज्ञ बड़ा ही आश्चर्य जनक हुआ। पूर्वकाल में विश्व की सृष्टि की इच्छा से विश्व स्पष्टाओं की भाँति उस यज्ञ में वैखानस, प्रियमित्र, वालो खल्य मरिचि तथा अन्य सूर्य और अग्नि जैसी कान्ति वाले मुनिगण एवं पितृ देवता अप्सरायें सिद्ध गन्धर्व, नाग तथा चारणगण वहां उपस्थित हुये। उस यज्ञ में इन्द्रपुरी की भाँति उत्तमोत्तम सामग्रियां भरी थीं एवं स्रोत, सत्र तथा ग्रहों से देवताओं की, पित्र्य कर्मों से पित्रों की तथा जाति के अनुसार गंधर्व आदिकों की पूजा उन आराधना के प्रेमी ऋषियों ने की। उस यज्ञ में गन्धर्व सामगान करते थे, अप्सरायें गान तथा नृत्य करती थीं तथा मुनिगण चित्र विचित्र अक्षरों और पदों वाली वाणीका उच्चारण कर रहे थे। मन्त्र आदि तत्वों के विद्वान आपस में बात चीत करते तथा कुछ वितण्डा से ही अपने प्रतिवादियों को परास्त कर रहे थे। वहां पर सांख्य तथा न्याय शास्त्र के विद्वान ऋषिगण इकट्ठे थे। ब्रह्म राक्षसों ने किसी प्रकार का ऊधम वहां नहीं किया। यज्ञघातक दैत्य या यज्ञचोर असुर नहीं पहुँचे और न वहां कोई प्रायश्चित या दुर्यज्ञ ही हुआ। शक्ति, बुद्धि और क्रिया के योग से सारी विधि उत्तम उत्तम रीति से हुई। इस प्रकार वहां मुनियों ने १२ वर्ष तक यज्ञ किया। भृगु आदि धीर ऋषियों ने वहां अलग २ यज्ञ किये और खूब दक्षिणा देकर सबको विदा किया। हे ब्राह्मणो! यज्ञके समाप्त होनेपर सबने महाराज शक्तिशाली वायु देवतासे वही बात पूछी जो आप लोगोंने हमसे पूछी है। भगवान वायु स्वायंभु मनु के शिष्य, प्रत्यक्ष दृष्टा तथा उनके वंश के हैं। वे अणिमा आदि आठ प्रकार की सिद्धियों के सहित पशु पक्षी आदि की सहायता से धर्म पूर्वक सभी लोगों का पालन-पोषण करते हैं।

वे सदा सातों स्कन्धों में योजनों की उड़ान भरते हैं। उनके राज्य में सातों गण अपने अपने स्थान पर स्थित और तैनात रहते हैं। वे महा बलवान हैं तथा वे प्रज्वलित तेज द्वारा एक में संगठित होकर तीनों भूतों की रक्षा तथा पोषण करते हैं, प्राण अपान आदि पांचों वृत्तियां इन्द्रियों से प्रेरित होकर शरीर को धारण करती हैं। इनको मनीषियों ने आकाश से उत्पन्न दो गुण वाला अर्थात् शब्द स्पर्श वाला तथा तेज प्रकृति वाला कहा है। वे अभिमानी देवता, भगवान वायु, अति क्रियाशील, सभी शास्त्रों के विद्वान तथा वातारणि कहलाते हैं। उन पुराणों के ज्ञाता पवन देव ने उन मुनियों को सुन्दर पुराण कहकर आनन्द में विभोर कर दिया।

इति श्री वायु महापुराण का द्वादश वार्षिक यज्ञ नामक दूसरा अध्याय समाप्त ॥२॥

तीसरा अध्याय

(प्रजापति-सृष्टि कथन)

सूतजी बोले—"उन कर्मठ, अति बुद्धिमान, तेजस्वी, सहस्रों सूर्य और अग्नि के समान दीप्तमान् त्रिलोकी का संहार एवं सृष्टि करने वाले भगवान महेश्वर को बार बार नमस्कार है। लोकपूजा प्रजाति गण, स्वयंभू रुद्र आदि महेश्वर, भृगु, मरिचि, परमेष्ठी मनु, रजोगुण एवं तमोगुण धर्म वाले कश्यप, वशिष्ठ, दक्ष, अत्रि, पुलस्त्य कर्दम, रुचि, विवस्वान एवं क्रतु तथा मुनि अङ्गिरा और प्रजापति को भावपूर्वक शिर से प्रणाम करके, इक्कीस क्रोधनों जिन्हें प्रजा की वृद्धि के लिए कार्य शासन दे दिया गया है-एवं अन्य पुरातन शाश्वतों, इतरगणों के साथ वर्तमान समस्त मनुओं, अन्य धैर्यशील, एवं तपस्या और शुभ आचार युक्त बृहस्पति, शुक्र आदि मुनियों का

अभिवादन कर कवि के पापों को नाश करने वाली अनुत्तमा प्रजापति की सृष्टि का वर्णन कर रहा हूँ, जो सृष्टि सुरेश, देवों और ऋषियों के समूह से भूषित शुभ अतुल्य, अमद एवं ऋषियों की प्रिय है, जिसमें प्रदीप्त कान्ति वाले प्रजापतियों, विशुद्ध वारणी बुद्धि और तेजधारी तपस्वियों और ब्रह्मा के दिन आदि समय का वर्णन तथा पूर्ण रूप से पौरुष एवम् श्री का विज्ञापन है, जो श्रुति और स्मृति में विस्तार से कही गई है, जिस श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कथा को वायुदेव ने कहा है, और जो नियत समासबन्धों एवं तरह तरह के शब्दों से चित्त को प्रसन्न करने वाली है। जिस प्रजासृष्टि की ब्रह्मा ने सर्व प्रथम बुद्धि पूर्वक रचना की है जिससे ईश्वर का प्रधान कार्य और प्रेरणा मिलती है, उस प्रकृति प्रसूति प्रधान ब्रह्म का जिसे अप्रमेय कारण भी कहते हैं, यहां वर्णन है जो आत्मा, गुहा, योनि, एवं चक्षु क्षेत्र, अक्षर शुक्र तप तथा प्रकाशमय सत्व है उसकी यहां चर्चा है। द्वितीय, नित्य व्यष्टि पुरुष लोकपितामह स्वयंभू पुरुष से संयुक्त रजोगुण की अधिकता और उत्पादकता से काल संयोग तथा नियम के कारण, क्षेत्रज्ञ से संयुक्त लोक की संतान वृद्धि के निमित्त भूत समस्त विकार तथा आठों प्रकृतियां महेश्वर के सकल मात्र से उत्पन्न हुईं ॥

देव, असुर, अग्नि, द्रुम तथा समुद्र की (गन्धर्व, यक्ष, उरग मनुष्य की) मनु, प्रजापति, ऋषि, पितर तथा द्विजातियों की, पिशाच, यक्ष, उरग, तथा राक्षसों की, ताराग्रह सूर्य, नक्षत्र एवं निशाचरों की, मास ऋतु संवत्सर, रात्रि तथा दिनों की, दिक्, काल योग आदि तथा युग और अयनों की वन की औषधियों एवं लताओं की, जलचर तथा अप्सराओं की, पशुओं विद्युत, सरित् मेघ, एवं विहगों की, जो कोई सूक्ष्म गति वाले, भूमि पर या आकाश में रहने वाले या स्थावर आदि जो कुछ हैं अर्थात् ब्रह्मा से लेकर जो कुछ उत्पन्न हुआ, सबकी गति और विभाग का यहां वर्णन है। छन्द, वेद, ऋक्, यजु, साम, सोम, यज्ञ एवं इनके आश्रय और जो कुछ ईश्वर के या उनकी प्रजाओं के इच्छित पदार्थ हैं वे सब एवं पहले वैवस्वत मनु

की फिर उन लोक पूज्य पुण्यात्माओं की उत्पत्ति का वर्णन है। जिनकी प्रसूति से तीनों लोक सुरेश देवर्षि एवं मनु आदि वंश भरे पूरे और शोभायमान है। रुद्र के शाप से दक्ष का फिर मनुष्य लोक में जन्म धारण करना, शिव की पृथ्वी पर नियम से रहना तथा दक्ष का प्रतिशाप पाना, मन्वन्तरों का बदलना तथा युग युग में संभूति (उत्पत्ति) उनका बार २ जन्म लेकर ऋषि होना, युगादिकों में ऋषियों की वृद्धि यह सब यहां बताया गया है। द्वापर युगों में जो जो व्यास वेदों को प्रकाशित करते हैं, उनका इस प्रकार वर्णन करते है-कल्पों, भुवनों तथा ब्रह्मा के दिन की गणना भी यहां लिखी हुई है। अंडज, उद्भिज्ज, स्वेदज तथा जरायुज जीवों तथा धर्मात्मा स्वर्गवासियो एवं यातना स्थान में पहुंचे सभी प्राणियों का प्रयाण तर्क युक्त है। प्रत्यक्ष के आत्यन्तिक, प्राकृतिक और नैमित्तिक तीनों कारण विशेष रीति से बंध और मोक्ष तथा मुख्य संसार की गति का है। प्राकृतिक अवस्था में कारणों की कैसी स्थिति रहती है। तथा फिर कैसी प्रवृत्ति है। ये सब बातें शास्त्र की युक्ति और अपनी बुद्धि के अनुसार बुद्धिमानों के लिए प्रकाशित किया गया है। हे ब्राह्मणो! पहले कहे के अनुसार ऋषियों ने कहा है सो मैं कह रहा हूँ आप लोग सुनिये ॥३॥

इति श्री वायु महापुराण का प्रक्रियापाद में सृष्टि प्रकरण नामक तीसरा अध्याय समाप्त ॥३॥

चौथा अध्याय

[सृष्टि-प्रकरण]

ऋषि बोले—इतना सुनकर नैमिषारण्य के वे सभी ऋषि नेत्रों में आंसू भरकर सूतजी से कहने लगे—हे सूत, आपने व्यासजी से सब कुछ जान लिया है। आप प्रत्यक्ष देखने वाले हो तथा वंश के ज्ञाता हो। इसलिए आप इस लोक की उत्पत्ति का वर्णन कीजिये। जिसके जो जो वंशज हैं उन सबकी प्रजापति और विचित्र ऋषियों की उत्पति जानने की हमको इच्छा है इस प्रकार ऋषियों के बार बार पूछने पर महात्मा लोमहर्षण जी क्रम से सविस्तार कथा को कहने लगे--

लोमहर्षण बोले--यह दिव्य मधुर, पाप नाशिनी, विचित्र वेद सम्मत कथा जो आपने हमसे पूछी है तथा जो कुछ मैं कहूँगा उस कथा को जो मनुष्य सुनेगा, दूसरों को सुनायेगा, ब्रह्मणों और यतियों को एकाग्रचित्त पर्वों पर तीर्थों में या मन्दिर में सुनायेगा, वह इस पुराण के कहने फल से दीर्घ आयु वाला होगा। जो पुरुष अपनी वंशावली स्मरण रखता है, उसकी स्वर्ग लोक में बहुत ही पूजा होती है। जो जैसा सुनेगा ठीक ठीक वैसा ही सबसे उस कथा को कहने से उसकी कीर्ति बढ़ती है। शत्रुओं का नाश होता है और उम्र बढ़ती है। सृष्टि, प्रलय, वंश मन्वन्तर और वंशों का चित्रण करना ही पुराणों के पांच लक्षण हैं। वह न्याय से न्याय और पवित्र से पवित्र हैं। अब मैं समस्त वायुदेव के द्वारा कहा हुआ पुराण कहूँगा।

इस पुराण में प्रवधि, प्रलय, स्थिति और उत्पत्ति वर्णन की गई है। कही हुई चीजों का इकट्ठा करना पहला प्रक्रिया पाद, उपोद्घात पाद, अनुषङ्ग पाद तथा उपसंहार पाद भी हैं। ये धर्म, यश आयु के देने वाले तथा सब पापों का नाश करने वाले हैं इस प्रकार चारों पादों को छोटे रूप में यहां लिख दिया है, अब मैं इनको क्रम से विस्तार पूवक कहूँगा। उस हिरण्यगर्भ पुरुषेश्वर, अज, प्रथम, विशिष्ट प्रजारूप लोक मात्र स्वयम्भू ब्रह्मा को प्रणाम करके महत् तत्व से प्रारम्भ कर नाना रूपों और ढंगों के साथ पांच प्रमाणों और छः श्वेतों वाली पुरुष से अधिष्ठित वन्दनीय भूत सृष्टि को मैं सुनाऊँगा। अव्यक्त कारण जो सदा सत् और असत् रूप में रहता है जिसे तत्व की चिंता करने वाले प्रधान एवं प्रकृति तथा गन्ध,वर्ण से शून्य शब्द छोने से रहित अजात, ध्रुव, अक्षय्य, नित्य, अपने में उपस्थित,जगत् का आदि कारण महत् भूत परब्रह्म, सनातन तथा समस्त भूतों के शरीर रूप को अव्यक्त कहते हैं, जो अन्त आदि से पहित सूक्ष्म निर्गुणात्मक सबकी उत्पत्ति तथा प्रलय का स्थान, असाम्प्रत अविज्ञेय ब्रह्म पहले हुआ उसीकी आत्मा से यह सारा संसार तपोमय भरा था। उसके गुणों की साम्यावस्था, तपोमय व सिर्फ एक गुण भाव वाले सृष्टि काल में क्षेत्रज्ञ के अधिष्ठान ने गुणयुक्त महान नाम का तत्व पैदा हुआ जो पहले छोटा अव्यक्त से ढका था। पहले सत्व महान पैदा हुआ। सत्व मात्र प्रकाश रूप मनको ही महान रूप बतलाना चाहिए। उसका प्रयोजन भी मन ही कहलाता है। क्षेत्रज्ञ से अधिष्ठान से वह लिङ्ग मात्र उत्पन्न हुआ। लोक के तत्वों के कारण धर्म उसके रूप हैं। सृष्टि की इच्छा से प्रेरित होने पर महान ही सृष्टि करता है। उसी को विद्वान मनुष्य मन, महान, मति, ब्रह्मा, भू, बुद्धि, प्रसिद्धि, ईश्वर, प्रज्ञा, चिति, स्मृति, संविद् और विपुर कहते हैं। यह विभु, सूक्ष्मता से सम्पूर्ण भूतों की चेष्टा को फल का मनन कर लेता है। इसी-लिये इसको मन कहा गया है। तत्वों में सबसे पहले पैदा होने से

परिमाण में शेष गुणों से बड़ा होने के कारण इसको महान कहते हैं यह मौन धारण करता है। संसार और मनुष्यों के भोग के विषय में विभाग को समझता है इसलिये उसे मति कहा गया है। वृहत् और वृहण होने के कारण उसके आश्रय के भावों को बढ़ाता है। इसलिए इसको ब्रह्मा कहते हैं। सारी देहों तथा नियत तत्व भावों को अनुग्रह द्वारा भरता है अतःइसलिये उसे भू कहते हैं। इसीसे पुरुष हित और अहित सारे भावों का बोध करता है तथा कहता है इसकी बुद्धि संज्ञा है। भोग के ज्ञानात्मा होने से प्रसिद्धि तथा प्रत्युपभोग होता है एवं अपने गुणों वाले अनेक नामों से इसकी प्रसिद्धि है इसलिए महत् को ख्याति (प्रसिद्धि) कहते हैं। ये महात्मा सबको साक्षात जानते हैं इनका नाम ईश्वर है इसीसे ग्रह भी पैदा हुए इससे इनका नाम प्रज्ञा है। ज्ञान तथा रूप और क्रतु, कर्म फल सबको भोग के लिए चुनता है इसे चिति कहते हैं, वर्तमान अनीति और अनागत सभी कामों को याद रखता है इससे इसको नाम स्मृति कहते हैं पूरे ज्ञान को प्राप्त करता है इसकी संज्ञा माहात्म्य है? विन्दन अर्थात प्राप्त करने एवं ज्ञान के कारण तथा उसमें सब कुछ और यह सबमें विराजमान रहता है। इसलिये इसे बड़ी बुद्धि वाले संविद् कहते हैं। ज्ञानीनीधने इसे ज्ञान रूप होने के कारण ज्ञान कहा है। द्वन्दों के अच्छे जगह होने के कारण इसे विद्वान मनुष्य गण विपुर कहते हैं। लोकों का सब कुछ होने से निश्चय ही ईश्वर है ब्रह्म होने से ब्रह्मा एवं उद्भूत होनेसे भव तथा क्षेत्र के विज्ञान और एकत्व के कारण इसे "क" कहते हैं? पुरी में सोता है। इसलिये उसे पुरुष कहते हैं। किसी ने इसे पैदा नहीं किया तथा सबसे पहले होने की बजह से इसे स्वयम्भू कहते हैं। अच्छे विचारों को मनन करने वाले तथा तत्वों के भाव जानने वालों ने इस प्रकार इसकी व्याख्या की है। सर्ग की की इच्छा से प्रेरित होकर महान सृष्टि करता है। संकल्प तथा अध्यवसाय इसकी दो वृत्तियां हैं। लोकों के तत्व पदार्थ के हेतु धर्म आदि इसके रूप हैं और यह सात्विक, राजस और तामस रूप से त्रिगुण

है। त्रिगुण में रजोगुण की अधिकता से घमन्ड पैदा करता है। वह महान से प्रावृत आदि भूत और विकृत था यह सृष्टि, महतत्व से रुकी थी। उस तमोवहुल अहंकार से भूत तन्मात्र की सृष्टि हुई, वह भूतादि अहंकार तामस ही तो हैं भूतादि के विकृत होने पर शुद्ध तन्मात्रा की सृष्टि हुई और उससे शब्द लक्षण वाला महाविवर आकाश उत्पन्न हुआ। फिर भूतादि अहंकार ने शब्द रूपी आकाश का ढक लिया और फिर उस शब्द रूपी आकाश ने स्पर्श तन्मात्रा की सृष्टि की उससे बलवान वायु पैदा हुआ उसका गुण स्पर्श है। शब्द रूपी आकाश ने स्पर्श मात्र को ढक लिया। वायु ने विकृत रूप तन्मात्रा की सृष्टि की, वायू से ज्योति निकली। ज्योति का गुण कहा जाता है वायु की स्पर्शतन्मात्रा की रूपतन्मात्रा को ढक लिया है फिर ज्योति की विकृति से रस तन्मात्रा की उत्पत्ति हुई, इसके बाद ताप से रसमय जल की सृष्टि होती है जल की यह तन्मात्रा भी रूपतन्मात्रा से ढकी होती है। जलीय रसमात्रा की विकृति से गन्ध मात्रा का उद्भव हुआ, उसी से भूमि का गुण गन्ध है। रसमात्रा वाला तोय गन्ध मात्रा को भूतों में ढके रहा। उन उन भूतों में वह शब्द मात्रा रहती है इसीलिए इसे तन्मात्रा कहते हैं। नाम अविशेष होने तथा शान्त घोर और फिर मूढ़ न होने के कारण इन तन्मात्रा को अविशेष कहते हैं इन भूतों और तन्मात्राओं की सृष्टि को बराबर समझना चाहिये। अन्य सात्विक वैकारिक अहंकार से सत्व के उद्रेक के कारण वकारिक सृष्टि एक साथ प्रवृत होती है पांच ज्ञानेंद्रियां तथा पांच कर्मेन्द्रियां हैं साधक या करण का नाम इन्द्रिय है। ये देश वैकारिक देव हैं। ग्यारहवां मन भी वैकारिक देव ही है। श्रोत्र, त्वचा, चक्षु जिह्वा एवं पांचवी नासिका ये शब्द आदि की प्राप्ति या बोध के लिए हैं। इन्हें ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं दोनों पाद, गुदा, लिंग दोनों हाथ तथा दसवीं इन्द्रियवाणी है इनके कर्म गीत, विसर्ग, आनन्द शिल्प तथा वाक्य हैं, शब्द रूपी आकाश ने स्पर्श मात्र में प्रवेश किया। अतः वायु शब्द एवं स्पर्श दो गुणों वाला हुआ,

वैसे ही शब्द तथा स्पर्श ये दोनों गुण रूप में आविष्ट हुए और उससे शब्द स्पर्श तथा रूप उन तीनों गुणों वाली अग्नि हुई। शब्द स्पर्श एवं रूप फिर रसमात्र में प्रविष्ट और उनसे चारों गुणों वाला रसमय जल हुआ। इन गुणों से गन्ध संयुक्त और उससे यह पृथ्वी पैदा हुई इसलिये स्थूल भूतों में पृथ्वी पांच गुणों वाली दीखती है और इसीलिये ये स्थूल भूत शांत घोर तथा मूढ़ और विशेष कहे गये हैं एक दूसरे में प्रविष्ट होने के कारण ये एक दूसरे को धारण करते हैं यह सब केवल लोकालोक से सम्पूर्णतया आच्छन्न भूमि के भीतर हैं। इन्द्रिय ग्राह्य तथा नियत होने के कारण ये विशेष कहलाते हैं। पूर्व पूर्व के गुण उत्तर उत्तर में मिलाते हैं। इन सब के जितने जितने और जो जो गुण हैं उसके वे स. बताये गये हैं। किसी को शुद्ध वायु में अपने दोष कारण गन्ध गुण मिलता है वह गन्ध पृथ्वी का ही समझना चाहिये, क्यों कि वहां वायु में पृथ्वीतत्व मिला है। ये सातों महाबली पृथक २ अनेक होकर बिना पूर्णतया मिले प्रजाओं की सृष्टि नहीं कर सके। तब महत् तत्व लेकर विशेष पर्यन्त ये तहत तत्व एक दूसरे के आधार बनकर पुरुष के अधिष्ठान तथा अव्यक्त के अनुग्रह से अण्ड की पैदायश करते हैं एक ही समय विशेषों से यह अण्ड उस विपुल जल से पानी के बुलबुले की तरह पैदा हुआ उससे ब्रह्मा का काय सिद्ध हुआ। प्राकृत अंड के विकसित होने पर उसमें से क्षत् स्वरूप क्षेत्रज्ञ ब्रह्मा हुए। वही प्रथम शरीर हैं उन्हीं को पुरुष कहते हैं भूतों के आदि कर्त्ता ब्रह्मा ही पहले रहे। सर्ग या प्रतिसर्ग में पहले पहल वही हिरण्यगर्भ चतुर्मुख ब्रह्म नामक क्षेत्रज्ञ प्रकट होते हैं। सृष्टिकाल में करणों के साथ इनकी सृष्टि होती है। फिर प्रलयकाल में करणों को त्याग देते हैं और फिर असमाहार सन्धियों में शरीरों को धारण कर लेते हैं जो हिरण्यमय मेरु है वही उस महात्मा का कलल है समुद्र उसका गर्भजल तथा पर्वत उसकी जरादि हड्डियाँ हैं उस अण्डके भीतर ये सारे लोक तथा सातों समुद्रों के साथ सात द्वीप वाली पृथ्वी छिपी हुई है।

हजारों बड़ी नदियों और पर्वतोंके साथ ये सब लोक तथा सम्पूर्ण संसार उसी के भीतर है। चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह और वायु जो कुछ लोक या अलोक है सब उस अण्ड में है। वह अण्ड दस गुने जल से बाहर घिरा हुआ है और इसी प्रकार दसगुना जल बाहर के तेज से ढकी हुई है? दस गुने वायु से तेज बाहर को ढका हुआ है। वायु दस गुने आकाश से और आकाश वायु से ढका हुआ है। स्वयं आकाश भूतादि अहंकार से ढका है। फिर भूतादि महत् तत्व अव्यक्त से ढका हुआ है। इन सात प्राकृत आवरणों से अण्ड ढका हुआ है। ये आठ प्राकृतियां एक दूसर को आच्छादित करके रहती हैं सृष्टि काल में स्थिति रहकर फिर प्रलय काल में एक दूसरे का ग्रास कर जाती हैं। इस प्रकार एक दूसरे से पैदा होती तथा एक दूसरी को धारण करती हैं। आधार और आधेय भाव से विकृति अपनी प्रकृति में रहती है। अव्यक्त को क्षेत्र तथा ब्रह्मा को क्षेत्रज्ञ कहते हैं। यही क्षेत्रज्ञ से अधिष्ठित प्राकृत सर्ग है। यह पहले अबुद्धि पूर्वक जैसे तड़ित होती है हिरण्य गर्भ की उत्पत्ति को जो ठीक २ जानता है उसकी आयु, कीर्ति, धन और प्रजा सभी बढ़ती हैं। अच्छी आत्मा निवृति का इच्छा करने वाला मनुष्य भी पुराण सुनने से गति और उसे सुख और दृष्ट मिलता है।

इति श्री वायु महापुराण का प्रक्रियापाद में प्रसृष्टि प्रकरण नामक चौथा अध्याय समाप्त ॥४॥

पाचवां अध्याय

[सृष्टि प्रकरण]

लोमहर्षण बोले—हे ब्राह्मणो! जो सृष्टि समय की अवधि बतलाई है वही परमेश्वर का दिन समझा जाता है इतनी ही बड़ी

ईश्वर की पूर्णतया रात्रि भी होती है जो सृष्टि है वही उसका दिन और प्रलय ही उसकी रात है। अतः उसका दिन ही दिन होता है रात कभी नहीं होती। मनुष्यों के हेतु रात का भी उपचार कर दिया है। प्रजायें प्रजापति वर्ग सनत्कुमार तथा ऋषि और मुनि ज्ञानेन्द्रियां और उनके विषय पांचों महाभूत तथा तन्मात्रयें और कर्मेन्द्रियां, बुद्धि और मन ये सब परमेश्वर के दिन में स्थिति रहते और दिन के अन्त में उसीमें लीन हो जाते हैं। फिर रात के खत्म होने पर संसार की उत्पत्ति होती है। विकार का संहार होने पर जब सत्व अपने में स्थिति रहता है उस समय प्रधान और पुरुष दोनों एक भाव से स्थिति रहते हैं। ये दोनों तमोगुण और सत्वगुण बराबर से स्थिति रहते हैं। फिर बढ़ घट कर एक दूसरे की विषमता से उत्पत्ति होती है। गुणों का बराबर स्थिति में प्रलय तथा वैषम्य में उत्पत्ति होती है जैसे तिलों में तेल अथवा दूध में घी रहता है। उसी प्रकार सत्व और तम में अव्यक्त के आश्रय से रजोगुण रहता है। फिर पूरी पारमेश्वरी परा रात्रि की उपासना करके प्रकृति परमेश्वर ही, जब दिन का शुरू होता है तब अपने योग से अण्ड में प्रवेश करके प्रधान प्रकृति और पुरुष को बेचैन कर देती है। प्रकृति के बेचैन होने पर रजोगुण पैदा होता है। बीजों में जल की तरह रजोगुण पैदा हुआ। गुण की विषमता पाकर चेतना के अधिष्ठान से सृष्टि होती है। गुण में क्षोभ आने पर आश्रित, परम, गुह्य, सर्वात्मा, शरीरी तीनों देव प्रगट हुये। रजोगुणी ब्रह्मा, तमोगुणी अग्नि तथा सत्वगुणी विष्णु पैदा हुये। रजोगुण के प्रकाशक ब्रह्मा सृष्टि करने वाले तथा तमोगुण के निर्माण काल रूप से तथा सत्व के निर्माण श्री विष्णु उदासीन भाव से स्थिति हैं यही तीनों लोक, ये ही तीनों गुण, ये ही तीनों वेद और ये ही तीनों अग्नियां हैं। ये एक दूसरे की सहायता करने वाले हैं। आपस में ये एक क्षण के लिए भी अलग नहीं हो सकते हैं। ईश्वर पर देव हैं, विष्णु महान से परे हैं रजोगुण से मिलकर ब्रह्मा सृष्टि करते हैं। 'पर' नाम है पुरुष का और परा

प्रकृति को कहते हैं महेश्वर के अधिष्ठान से वह चारों ओर से प्रेरित होकर कार्य में प्रवृत्त होती है वे चिरकाल तक प्रिय होने के कारण अपने विषय में रहकर फिर महान की प्रवृत्त होती है। तब उस सत् असत् रूप से ब्रह्मा और बुद्धि दोनों पैदा हुये। इसीलिए तम तथा अव्यक्तमय क्षेत्रज्ञ ब्रह्मा कहा जाता है। कार्य और करणों से सिद्ध ब्रह्मा सबसे पहले थे। तेज से उस प्रथम बुद्धिमान अव्यक्त का प्रकाश होता है। वही प्रथम शरीरी कारण कारण रूप से है। वह अप्रतहित धर्म-ज्ञान तथा ऐश्वर्य से युक्त है अप्रतहित धम तथा वैराग्य से भरा हुआ है। उसी ईश्वर का अप्रतहित ज्ञान वैराज्ञ रूप है इस धमंडी ब्रह्मा के धर्म और धन से बुद्धि प्रकट हुई। यह जो अपने मन से चाहता है वही इस अव्यक्त से पैदा होता है। वर्शाकार, वैगुण्य तथा आदत के कारण ब्रह्मत्व में चतुर्मुख तथा कालतत्व में अन्त हुआ। हजारों सिरों वाला यह पुरुष है। इस स्वयम्भू की तीन अवस्थायें हैं इस स्वयंभू को ब्रह्मा होने पर सत्व तथा रजोमयी, काल होने पर रज और तपोमयी तथा पुरुष होने पर सत्वमयी गुण वृत्ति होती है वह ब्रह्मा होकर लोकों की सृष्टि करता, काल होकर संहार करता और पुरुष होने पर उदासीन रहता है प्रजापति की तीन अवस्थायें भी हैं ब्रह्मा कमलगर्भ के रङ्ग के काल काले रङ्ग के हैं और पुरुष की आंखें पुण्डरीक की सी हैं वही रूप परमात्मा का है यह योगेश्वर अपनी लीला से तरह २ की शक्ल, क्रिया रूप तथा नामों द्वारा शरीरों को बनाते तथा बिगाड़ते हैं संसार में ये तीन प्रकारसे रहते हैं इनका नाम त्रिगुण हैं, चार प्रकार से अलग होने के कारण इन्हें चतुर्व्यूह कहा गया है अस्ति तथा आदान करने तथा विषय का भोग करने से सदा उसका वही भाव रहता है इसलिये उसे आत्मा कहते हैं सर्वत्र गतियों और अन्य शरीर धारण करने से ऋषि कहलाते हैं और स्वयं सबके स्वामी होने से प्रभू कहे जाते हैं। सबके भीतर होने के कारण ये विष्णु कहलाते हैं। भग अर्थात् ऐश्वर्य के होने से भगवान तथा राग पर शासन करने के कारण इसको राग कहते हैं।

प्रकृष्ट होने से तथा पालन करने से उसे ओ३म् कहते हैं। सब कुछ का ज्ञान होने से इसे सब कुछ तथा सब स्थानों में होने से इसे पर्व कहते हैं। नरों का अयन होने से नारायण कहते हैं। अपने को तीन प्रकार से अलग २ करके त्रैलोक्य को चलाता है। इन तीनों रूपों से वह सृष्टि संहार तथा पालन करता है। पहले पहल वह हिरण्यगर्भ चतुर्भुज रूप में पैदा हुआ। आदि होने से वह आदि देव तथा अजन्मा होने से अज कहाते हैं। सब प्रजाओं का पालन करता इसीलिए उसे प्रजापति कहते हैं। सब देवों में यह बड़ा है इसलिये यह महादेव कहाते हैं। सबका ईश तथा लोकों के वश में न होने के कारण यह ईश्वर कहलाता है बृहत् होने से ब्रह्मा तथा भूत कहा जाता है। सर्वव्यापी होने से विभु इतका नाम है। पुर अर्थात् शरीर में सोता है इसलिये उसे पुरुष कहते हैं किसी ने उसे पैदा नहीं किया और रूप के पूर्व में वह रहता है सब उसे स्वयम्भू कहते हैं। पूज्य होने से यज्ञ तथा कान्निदर्शी होने के कारण कवि कहलाते हैं सबका गन्तव्य होने में क्रमण तथा वर्णों की रक्षा करने से सूर्य और कपिल कहलाते हैं। आगे पैदा होने के कारण यह अग्नि कहलाती है। हिरण्य इसका गर्भ तथा यह हिरण्यके गर्भ उत्पन्न हुआ इसे पुराण में हिरण्यगर्भ कहते हैं। स्वयंभू के वर्ष आदि काल सैकड़ों वर्षों में भी नहीं गिनाये जाते। कल्प संख्या से युक्त ब्रह्मा का काल पर कहलाता है। उतना ही उसका काल अभी बाकी है। उसके अन्त में प्रलय होता है। करोड़ों हजारों कल्प जो बीत गये उतने ही पर काल अभी बाकी है इस समय जो बारह कल्प हैं उसे मैं कहूँगा। ब्रह्मणो! उनमें से पहला यह साम्प्रत कल्प है। इसमें स्वायंभू आदि चौदह मनु हैं। उनमें व्यतीत वर्तमान तथा भविष्य जो हैं वे ही नरेशर भली भांति सातों द्वीपों वाली पृथ्वी का पूरे चार हजार युग तक तप तथा प्रजोत्पत्ति से पालन करते हैं। उनकी कथा मैं पूर्णरूप से सुनाऊँगा।

ज्ञानी पुरुष को एक ही मन्वन्तर से सभी मन्वन्तरों का और भविष्य से भविष्यों का तथा कल्प से कल्पों का और वंश और देवों के साथ अतीत कल्प जैसे हैं वैसे ही भविष्य में भी होंगे ऐसा विचार कर लेना चाहिये।

श्रीवायुमहापुराण का प्रकृति वर्णन नामका पांचवां अध्याय समाप्त॥५

छठा अध्याय

[सृष्टि प्रकरण]

सूतजी बोले--पृथ्वी तल पर अग्नि नष्ट हो जाने से जल पैदा हुआ। स्थावर जङ्गम सहित पृथ्वी जब उस जल में विलीन हो गई, तब चारों ओर केवल समुद्र ही समुद्र दिखाई देने लगा। उस प्रलय पयोधि में कोई दूसरा पदार्थ नहीं दीखता था। उस समय हजार नेत्र हजार पाद और हजार शीर्ष, रुक्म वर्ण और अतीन्द्रिय पुरुष भगवान ब्रह्मा जिसको नारायण कहते हैं वे उस सलिल राशिमें सो गये। कुछ समय बाद सतोगुण के जाग्रत होने पर वे जाग गये उस समय उनको चारों दिशाओं में कुछ नहीं दिखाई पड़ता था। उस नारायण के प्रति यह श्लोक कहा जाता है कि 'अप्, नार, तनु' ये जल की संज्ञायें हैं वे जल में सोते हैं इसलिये वे नारायण कहे जाते हैं। वे ही हजार युगों के बराबर रात का समय बीत जाने पर रात्रि के अन्त में सृष्टि के लिये ब्रह्मा का रूप धारण करते हैं ब्रह्मा उस समय वायु का आधार कर वर्षा काल रात के समय इधर उधर उड़ने वाले जुगनू की तरह इधर उधर समुद्र तल पर घूमने लगे। उस समय समुद्रमें डूबी हुई पृथ्वी का पता पाकर उसके उद्धार के लिये सचेष्ट हो गये। उन्होंने पूर्व कल्पों में जैसा शरीर धारण कर लिया। वैसा ही दूसरा शरीर धारण कर लिया। फिर वे महात्मा मनमें दिव्य रूप का ध्यान करने लगे वे चारों ओर से पृथ्वी को जल से घिरी हुई देखकर सोचने लगे कि किस महान शरीर को धारण कर इस पृथ्वी

का उद्धार करूँ। इतने में जल क्रीड़ा के लिये वाराह रूप की उनको याद आ गई। तब हरि ने, प्राणियों से अजेय, वाङ्मय और धर्म मूर्ति वाराह रूप को धारण किया जिनका शरीर दस योजन लम्बा और सौ योजन ऊंचा था। वे रङ्ग में नीले मेघ के समान और बहुत शोर करने में भी बादलों के ही समान थे। महापर्वत के समान विशाल शरीर, श्वेत तीक्ष्ण और कठोर दांतों वाले उस वाराह की आंखें बिजली और अग्नि के समान चमकीली थी। सूर्य के समान तेजस्वी उनका स्कन्ध मोटा और गोल तथा लम्बा था। सिंह के समान गमन करने वाले उस देव का कटि भाग मजबूत तथा ऊँचा था। इस प्रकार सुडौल शुभ लक्षण और विपुल शक्ति वाले उस वाराह रूप को धारण कर भगवान पृथ्वी का उद्धार करने के लिए रसातल में घुस गये। उस भगवान वाराह के वेद चरण, यूप दंष्ट्रा, यज्ञ, वक्षस्थल, चिति मुख, अग्नि, जिह्वा, कुश, रोम समूह और ब्रह्मा ही सिर थे। उस पुरुष ने दिन रात को नेत्र के रूप में धारण किया था। वेदांग उनके कानों के कुण्डल, आज्य नासिका के छेद और स्रुवा उनका नथुना था। उनका दीर्घ घोष ही सामगान था सत्य धर्ममय वे श्रीमान धर्म और विक्रम की साक्षात मूर्त्ति थे। प्रायश्चित उनका रथ, पशु उनका भयकर जानु देश था। वे महान आकार वाले थे, उनकी अन्तड़ियां होय लिङ्ग, स्थान और दवाइयों के बीज ज्ञान उका हृदय, मन्त्र स्फिग्, आज्य खून, सौम खून, तथा वेद स्कन्ध थे। हवी उनके शरीर को सुगन्ध, हव्य उनका वेग और प्राग्वंश शरीर था। परम बुद्धिमान वे तरह २ की विद्याओं वाले दीक्षित थे। महायज्ञ मद्यविभु योगी का दक्षिण हृदय था। उपकर्म, रुचिर इष्टि और प्रवर्ग्य ही वैभव था नाना छन्द गतिपथ और रहस्यमय उपनिषद आसन थे। पत्नि छाया के सहित वे मणिमय सुमेरु पर्वत के समान ऊँचे थे इस प्रकार यज्ञ-वाराह बनकर उस जल राशि में घुस गये। उस प्रजापति ने जल से ढकी पृथ्वी के पास जाकर उसको दांतों से पकड़ कर ऊपर स्थापित कर दिया। इतना कह चुकने के बाद समुद्र जल को समुद्रों, में नदा

जल को नदियों में बांट दिया। पृथ्वी के उद्धार करने वाले उस हरि ने पृथ्वी को अपने ठीक स्थान पर रखकर पहले मनमें भविष्य की रूप-रेखा निश्चित कर उसको जल तल पर छोड़ दिया। उस जल राशि के ऊपर की पृथ्वी बहुत बड़ी नाव के समान स्थिति हुई जो कि अपने आकार की विपुलता और भगवान के प्रभाव से डूबती नहीं है।

उन भगवान कमल नेत्र ने पृथ्वी का उद्धार करने के बाद संसार स्थापन के उद्देश्य से पृथ्वी को कई भागों में अलग अलग कर दिया। पहले भूतल को समातल कर उस पर पहाड़ों को स्थापित कर दिया, पूर्व सृष्टि में जो संवर्त्तक अग्नि से गल गये थे और धरातल पर चारों ओर जलकर बिखर गये थे, वे उस जल पावन में शीतलता के कारण, वायु के द्वारा जम इकट्ठा हो जाने से पहले जहां जहां स्थिति थे वहां वहां इस बार भी अचल हो गये। पहले पिघल कर वे अचल हुये इसीलिए पर्वतों का नाम अचल पड़ा, पर्व होने के कारण वे पर्वत कहे गये जल के भीतर निगले जाने के कारण गिरि और शिलाओं के चुबने के कारण पर्वतों का नाम शिलोच्चय कहा गया उन लोक समुद्र और पर्वतों के नष्ट हो जाने पर विश्व की सृष्टि करने वाले हरि कल्प के आदि में बार बार पृथ्वी का हिस्सा और निर्माण करते हैं। इस नियम के अनुसार इस बार भी उन्होंने समुद्र, सातों द्वीप और पर्वतों से मिली हुई उस पृथ्वी भू आदि चारों लोकों की सृष्टि की, लोक सृष्टि के बाद प्रजासृष्टि की गई। विविध प्रजाओं की सृष्टि की इच्छा करने वाले स्वयभू भगवान ब्रह्मा ने पूर्व कल्प की तरह ही सृष्टि की। जिस समय ध्यानमें लीन होकर उन्होंने बुद्धि पूर्वक सृष्टि की इच्छा की उसी समय ध्यानके साथही तपोमय,तमोमोह,महामोह तामिस्र और अन्ध नामक पांच प्रकार की तपोमय सृष्टि हुई। उस महात्मा के ध्यान मात्र से पांच पर्वों वाली यह अविद्या पैदा हुई। उस घमण्डी ध्यानस्थ देव का यह सर्ग पांच भागों में बांटा था। यह सर्ग चारों ओर से अन्धेरे से ढका ऐसा मालुम पड़ता था मानों घड़े से ढका दीपक

वह सर्ग बाहर और भीतर से प्रकाशमान शुद्ध और अचेतन था। इसलिये उन पांचों में बुद्धि और इन्द्रियां ढकी हुई थीं इसीलिए वे संवृत्तात्मा नामक मुख्य सर्ग कहलाये। ब्रह्मा अपने मुख्य सर्ग को इस प्रकार सृष्टि के काम में रुकावट देखकर नाराज हो गये। उस सर्ग से अलग हो वे अन्य सृष्टि के लिए ध्यान करने लगे। उनके ध्यान करने से वहां तिरछा श्रोत नाम का सर्ग पैदा हुआ। उस समय के पैदा हुये पदार्थ उल्टा व्यवहार और व्यापार करने लगे। इसलिये उनका नाम तिर्यक् स्रोत पड़ा वे सभी तमोगुण की अधिकता के अज्ञानी हुए। विपरीत मार्ग पर चलने वाले ध्यान और अध्ययन पर विचार करने वाले न थे। उस तिर्यक् स्रोत सर्ग को देखकर ईश्वर ने फिर दूसरी तरह की सृष्टि की। वह सृष्टि अहंकार प्रधान, अहंकार भाव वाली और अट्ठाइस प्रकार की है। एकादश इन्द्रिय वाले उस सर्ग का नवविध उदय बताया है। तारक आदि की सख्या आठ हैं जिनकी शक्ति तरह तरह की है। उनका अन्तस प्रकाशमान परन्तु बाहर से वे ढके हुए हैं। (वे तिर्यक् व्यवहार वाले हैं अतः उनका तिर्यक् स्रोत नाम है। इस तिर्यक् स्रोत वाली सृष्टि को देखकर भी ईश्वर ने तीसरी सृष्टि करने की इच्छा की। क्योंकि पहले की दो सृष्टियों को देखकर उनके हृदय में अन्य तरह की सृष्टि करने की इच्छा हुई थी) उनके नित्य ध्यान से सात्विक सर्ग उत्पन्न हुआ यह तीसरा सर्ग ऊर्ध्वस्रोत हुआ जो कि ऊर्ध्व दिशा की ओर ही स्थिति रहा। अतः उसकी ऊपर की ओर ही गति थी इसलिए उस सर्ग का नाम ऊर्ध्व स्रोत पड़ा। उस सर्ग के जीव सुखी और प्रेमी थे। उनका अन्तः और बाह्य दोनों प्रकाशमान और समान भाव से व्यवस्थित था। ऐसे ऊर्ध्व सर्ग में पैदा सभी ऊर्ध्व स्रोत ही कहे जाते हैं। उसी सर्ग के अन्तर्गत जीवों में प्राण चार करने वायु आदि मिले हुये हैं।

ऊर्ध्व प्रवृत्ति होनेके कारण ही वह सर्ग ऊर्ध्व स्रोत माना गया है। उस समय ऊर्ध्व स्रोत देवों की सृष्टि हो जाने के बाद प्रभु ब्रह्मा

अत्यन्त खुश हुये। इसके बाद अब दूसरी प्रकार की सृष्टि करने का विचार किया। उस प्रभु ईश्वर ने अपनी इच्छानुसार सर्ग की सृष्टि की। उस समय सत्य चिन्तन करने वाले ब्रह्मा के चिन्तन से अव्यक्त से अव्यक्त स्रोत नाम का सर्ग उत्पन्न हुआ जो प्रभु की इच्छानुसार था। वह सर्ग मध्यगत प्रवृति वाला था इसलिये वह अर्वाक् स्रोत कहा गया है उस सर्ग के जीव प्रकाश सत्व, रज, और तम तीनों गुणों से पूर्ण थे। इसीलिए उनमें दुख की मात्रा अधिक थी और वे बार बार कर्म करने वाले हुये। वे मनुष्य अन्न और वाहा सभी ओर से प्रकाश पूर्ण और सृष्टि के सहायता करने वाले हुए। वे तारक आदि लक्षणों से आठ रूपों में स्थिति हैं। वे सिद्धात्मा मानव गन्धर्वों के सहायक हैं इस प्रकार यह सर्ग तैजस् और अर्वाक् स्रोत कहा जाता है। पाँचवां सर्ग अनुग्रह के नाम से प्रसिद्ध है, जिसकी व्यवस्था शक्ति तुष्टि एवं सिद्धि के उलटे क्रम से की गई है। उस सृष्टि के प्राणी विश्वर्त एवं उसके वर्तमान अर्थ को तात्विक रूप से जानते हैं, इस प्रकार पञ्चभूत आदि जीवों का वह सर्ग छठा सर्ग कहा जाता है। उनमें जो संचय तथा बराबर हिस्सा वाले और भक्षण शील और कठोर प्रकृति के हैं, उन्हें भूत सर्ग नाम का छठा सर्ग माना जाता है। विपपर्य के क्रम से पैदा वह भूतादि सर्ग, शक्तिहीन रूप से स्थिति है। प्रथम उत्पन्न होने के नाते इसको महत् सर्ग कहा गया है इसीलिये उसे महत् सर्ग जानना चाहिये पञ्च-तन्मात्रा का दूसरा रुप भूत सर्ग कहा जाता है और विकार जनित होने के नाते उसके तीसरे रुप को वैकारिक कहते हैं। इन्हें इन्द्रिय द्वारा जीनत भी कहा जाता है। इस प्रकार बुद्धि पूर्वक प्राकृत सर्ग उत्पन्न हुआ। चौथा मुख्य सर्ग, जिसमें मुख्य स्थावर सर्ग का होना बताया है। तिर्यक् स्रोत वाले उस पाँचवें सर्ग को तिर्यक् योनि कहा है और ऊर्ध्व स्रोत उस छठे सर्ग को देवसर्ग। इसी प्रकार अर्वाक् स्रोत वाले को सातवां मानुष संग कहा जाता है एवं अनुग्रह सर्ग को आंठवां जो कि सात्विक और तामस के समिश्रण से उत्पन्न हुआ है।

इस प्रकार पांच प्रकार के विकृत और तीन प्रकार के प्राकृत सर्ग बताये गये हैं। इन्हीं विकृत तथा प्राकृत सर्गों के समेत नवें कौमार सर्ग की व्याख्या की है। (इनमें तीन प्रकार के इस प्राकृत सर्ग की बुद्धि पूर्वक सृष्टि की गई है) इस प्रकार की ब्रह्मा की ये छहों सृष्टियां बुद्धि पूर्वक ही प्रवृत होती हैं। अब मैं उस अनुग्रह नामक सर्ग की जो समान प्राणियों में चार प्रकार से पूरी तरह स्थिति है, अच्छी तरह से मैं आप लोगों को सुनाऊँगा। शक्ति, तुष्टि एवं सिद्धि के विपर्यय क्रम से स्थावर सृष्टि में विपर्यय और तिर्यक् योनियों में शक्ति का संचार हुआ है। अतः मनुष्यों में सिद्धि और देवों में तुष्टि पूर्ण रूप से निहित है। पुनः इस प्रकार प्राकृत तथा विकृत सर्ग नव प्रकार के बनाये हैं। आपस के सम्बन्ध से इन सर्गों के बहुत से भेद कहे गये हैं। सबसे पहले ब्रह्मा ने अपने ही समान विद्वान सनक, सनन्दन और सनातन नामक तीन मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। वे तीनों महातेजस्वी अपने सृष्टि विज्ञान के प्रभाव से निवृत्ति मार्ग पर अटल रहे। नाना तरह के रहस्य को जानकर वे ज्ञान सम्पन्न हो गये और पिता की आज्ञा न मानकर प्रजोत्पत्ति से विमुख हो दूर चले गये। इस प्रकार इन कुमारों के चले जाने पर ब्रह्मा ने फिर अपने पद का अभिमान करने वाले अन्य मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। जिन्होंने सृष्टि कार्य में पूरा सहयोग दिया। प्रलय तक स्थित रहने वाले स्थानाभिमानी देवों के नामों को गिना रहा हूं। जल अग्नि, पृथ्वी वायू, अन्तरिक्ष, दिशायें, स्वर्ग, दिव , समुद्र, नद, शैल, वनस्पतियां,औषधियाँ, आत्मा, मन,वृक्ष,छोटे वृक्ष, लव, काठ, कला मुहूर्त, सन्धि, रात्रि, दिन,पक्ष, मास, अयन, वर्ष, युग ये सभी स्थानाभिमानी और स्थान के नाम से प्रसिद्ध हैं। जिसके मुख से ब्राह्मण, वक्षस्थल से क्षत्रिय, उर से वैश्य और जिसके पैर से शूद्र इस प्रकार जिसके शरीर से सब वर्ण उत्पन्न हुये। जिन्होंने स्वयं लोकों को उत्पन्न किया, उस अव्यक्त से अण्ड की उत्पत्ति हुई और अण्ड से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुये। यह प्रक्रियापाद आप लोगों

से सूक्ष्म में कहा है। इस प्रकार आद्यपाद के द्वारा यह पुराण कहा गया है।

इति श्रीवायुमहापुराण का सृष्टि प्रकरण नामका छठां अध्याय समाप्त॥६

— इति प्रक्रिया पाद —

॥ अथ उपोद्घातपाद ॥

सातवाँ अध्याय

[प्रति सन्धि का वर्णन]

सूतजी बोले—यह पहला प्रक्रियापाद कह दिया गया जिसको सुनकर सनातन काश्यपेय प्रसन्न हो गये। इसके बाद सूत का प्रिय शब्दों से सम्मानकर उन्होंने फिर आगे की कथा पूछी कि हे कल्प का कथा जानने वाले ! आप अत्यन्त कुशल हैं अब इसके बाद प्रति-सन्धि के विषय में हम लोगों को बतलाइये। बीते हुये और वर्तमान कल्प का जो मध्यकाल है और उनकी जो प्रतिसन्धि है उसको हम लोगों को जानने की अधिक लालसा है।

लोमहर्षण जी बोले—"अब मैं अतीत और वर्तमान दोनों कल्पों की जो प्रतिसन्धियां हैं, जिन कल्पों में जो मन्वन्तर होते हैं, हे सुव्रत ! उसको मैं सुना रहा हूँ। यह जो वर्तमान कल्प है वह शुभ साम्प्रत या वाराह कल्प कहलाता है। उस कल्प से पूर्व का जो कल्प बीत गया है वह सनातन कल्प था। उस अतीत और उस वर्तमान बाराह कल्प की मध्य अवस्था के विषय में बताऊँगा। पूर्व कल्प के बीत जाने पर प्रतिसन्धि आती है, तब दूसरा कल्प जनलोक से आता है यही क्रम बार२ चलता रहता है। बीच में प्रतिसन्धि के आजाने से ही एक कल्प दूसरे कल्प से अलग होते हैं। पूर्व कल्प के बीत जाने पर उस अतीत कल्प की सारी क्रियायें सर्वथा छिन्न भिन्न हो जाती है। उस कल्प से आने वाले कल्प के प्रारम्भ तक का काल कल्प

की प्रतिसन्धि कहा जाता है। मन्वन्तर और युगों की अविच्छिन्न सन्धियां मन्वन्तर युगों के साथ परस्पर प्रवृत होती हैं। जो प्रक्रिया-पादमें संक्षेपमें कहे गये हैं। वे पूर्व कल्प हैं। उन परार्ध कल्पों में इससे पूर्व जो पहले पर कल्प था वह तो व्यतीत हो चुका किन्तु द्वितीय परार्ध कल्प अभी नहीं समाप्त हुआ है अन्य जो भविष्य में आने वाले कल्प हैं वे अपरार्ध से गुणीकृत हैं। हे ब्राह्मणो ! उनमें से पहला साम्प्रत नामक यह कल्प बीत रहा है। जो प्रथम परार्द्ध का काल स्थिति काल और इस द्विपरार्द्ध के बाद का प्रलय काल कहा गया। अर्थात् पूर्व और पर परार्द्ध का काल स्थितिकाल और इस द्विपरार्द्ध के बाद क प्रलय काल कहा जाता है।

इस कल्प से पूर्व जो सनातन कल्प बीत चुका है वह हजार चतुर्युग के अन्त में मन्वन्तर परिमित ब्राह्म दिवस के अन्त होने पर क्षीण हो गया। उस समय कल्प के क्षीण होने पर और प्रलय कालीन-दाह काल के आजाने पर उस कल्प में जितने विमान विहारी देवता, नक्षत्र, ग्रह, तारा मण्डल सूर्य और चन्द्रमा आदि ग्रह थे, वे सुकृतात्मा देव सब मिलाकर अट्ठाइस करोड़ थे। यह एक मन्वन्तर के देवतों की संख्या है। इस प्रकार की चौदहों मन्वन्तरों के देवों की संख्या तीन सौ बानवे करोड़ हुई। पहले बीते हुए कल्प में जो वैमानिक देव थे। उनकी संख्या सात सौ आठ हजार कही गई है। एक कल्पों में जितने वैमानिक देव होते हैं स्वर्ग में उतने ही चौदहों मन्वन्तरों में होते हैं। उस मन्वन्तर या कल्प काल में जितने देवता, पितर, मुनि तथा मानव उनके अनुचर, वर्णाश्रम, धर्मावलंबियों के पूज्य जितने देवता और मन्वन्तरों में जो देवलोक के रहने वाले देवता थे वे अपने संयोजकों के साथ उस समय संहार काल में प्रलय कालीन लक्षणों के उपस्थित हो जानेपर समान भाव से अपने अवश्यम्भावी स्थान नाशको जान गये। अन्त में वे त्रिलोकी के रहने वाले देवता जो कि अपने स्थान महत्व पर अभिमान करने वाले थे।

उस समय अपने स्थिति काल को समाप्त होता जान गये अतः अपने स्थानों को छोड़ कर उत्सुकता और विषादयुक्त हो महर्लोक जाने के लिए व्याकुल होकर सोचने लगे उस समय वे सभी देवता अपनी परम आत्म-विशुद्धि के कारण महर्लोक के उपर्युक्त शरीर को पा गये, इस प्रकार उस समय सबको मानसी सिद्धि प्राप्त हो गई। वे चौदह प्रकार के देवगण उस महर्लोक में उन ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों, भक्तों और अपर जनों के साथ जिन्होंने "महान" को प्राप्त कर लिया हैं– कुछ समय रहकर जन लोक जाने के लिए उद्विग्न होकर सोचने लगते हैं। इसके बाद वे अति विशुद्ध अन्तःकरण वाले जिन्होंने मानसी सिद्धि प्राप्त करली है, उन कल्प वासियों के साथ जिन्होंने कि 'महान' को प्राप्त कर लिया है–जन लोक को चले जाते हैं, वहां पर दसगुने समय तक आनन्द भोग कर पुनः वहां से तपोलोक को चले जाते हैं। वहां पर भी दश कल्प तक रहकर फिर सत्यलोक को चले जाते हैं। इस क्रम से कल्प निवासी ऊर्ध्व लोक जाते हैं। इस प्रकार एक के बाद एक लोक को प्राप्त करने में देवों के हजार युग बीत जाते हैं। वे देव ब्रह्मलोक में जाकर ऐसी गति को प्राप्त हो जाते हैं जहां से पुनः लौटते नहीं हैं। वहां वे आधिपत्य तो नहीं प्राप्त करते परन्तु रूप और विषय से ब्रह्म के ही अनुरूप होते हैं और उन्हीं के समान ऐश्वर्य का उपभोग करते हैं खुश होकर वे वहां ब्रह्मानन्द को पाकर ब्रह्म के साथ मोक्ष प्राप्त करते हैं, जो स्वयं प्रकृति सिद्ध अवश्यम्भावी सृष्टि प्रयोजनवश नाना तरह से सम्बन्ध हो जाते हैं, उस काल से सम्बन्ध उन देवों की ऐसी स्थिति हो जाती है जैसी जान बूझ कर सोने का बहाना करने वालों की होती है वे उस समय जैसे सोते हुये भी जागते रहते हैं उसी प्रकार उस समय उन देवों के मनमें तत्काल सम्बन्धी जाना तरह का ज्ञान पैदा हो जाता है। जो भेद ज्ञान प्रलय काल में रहता है वही अब अपने तरह २ के छोटे छोटे रूपों में व्यक्त हो जाता है। उन ब्रह्मलोक निवासी अपने धर्म का पालन करने वाले परन्तु सम्प्रति नाना तरह के दर्शन से

अधिकार से निकाले हुए पुरुषों के प्राकृत ज्ञानके साथही कार्य और कारण की सृष्टि होने लगती है। वे प्रथम श्रेणी के शुद्धात्मा, निरंजन और तुल्य लक्षण सिद्ध पुरुष अपनी प्रकृति में ही व्यवस्थित रहते हैं। प्रकृति उन द्वितीय कोटि के मुक्त पुरुषों पर सर्वथा अपनी धाक तो जमा लेती है। परन्तु यह पुरुष के बिना सहयोग के किसी कार्य को स्वयं शुरू नहीं करती है।

प्रलय काल में पुरुष में ही वह लीन रहती है सृष्टि शुरू होने पर या प्राकृत संयोग काल में भी शांत अग्नि ज्वाला के समान दुबारा उत्पत्ति नहीं होती है। इस प्रकार इसे त्रलोक्य से ऊर्ध्व अत्यंत महान लोकों में उन महापुरुषों के चले जाने पर उनके साथ रहने वाले वे महापुरुष जिन्होंने कि अपनी तपस्या से महर्लोक से ऊपर के लोगों का अधिकार नहीं प्राप्त किया है, कल्प पर्यन्त तक वही शरीर धारण कर निवास करते हैं। उस समय गन्धर्वों से लेकर पिशाच पर्यन्त, मानव, पशुगण, स्थावर, सांप आदि जो जीव पृथ्वी पर रहते हैं। उनको प्रलय का सामना करना पड़ता है। उस समय सूर्य की जो हजार किरणें चमकती रहती हैं, उनमें से प्रत्येक सप्त रश्मि होकर एक एक सूर्य बन जाती है। वे सूर्य अधिक से अधिक तेज होते जाते हैं और अपनी २ तेज ज्वाला से तीनों लोकों को जलाने लगते हैं। स्थावर, जंगम सब नदियां, सब पर्वत जो कि पहले बिना वर्षा के कारण सूख गयेथे. वे अब सूर्य की किरणों से जला दिये जाते हैं। वे समस्त धर्मात्मा और अधर्मात्मा पार्थिव पदार्थ जल जाते हैं। तब वे सभी अपने पार्थिव शरीर के जल जाने के कारण निष्पाप हो जाते हैं और उनका आयु युग के बीत जाने पर भी अपने अशुभ और शुभ कर्मों से सम्बन्ध रखने वाली योनि से सम्बध बना ही रहता है। अत्यन्त विशुद्ध, मानसी सिद्धि प्राप्त करने वाले व्यक्ति जनलोक में वैसी ही योनि प्राप्त करते हैं वे अव्यक्त अजन्मा ब्रह्मा की रात को वहां रहकर बिताते हैं पुनः सृष्टि काल में वे ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में उत्पन्न होते हैं। उसके बाद जब त्रिलोकी

के रहने वाले जन लोक में जाने के लिए नहीं शेष रह जाते हैं अर्थात् अपनी शक्ति के क्षीण हो जाने पर जब वे जनलोक के अधिकारी नहीं रहते मध्य सूर्य की ज्वाला से वे सब लोक बदल जाते हैं, सम्पूर्ण पृथ्वी वर्षा से पूरी तरह से भर जाती और सब आवास स्थान नष्ट हो जाते हैं तब समुद्र बादल सम्पूर्ण जल और सब पृथ्वी से सम्बन्ध जल राशि आपस में एक आकार होकर एक महा-सागर के रूप में हो जाती है। इस प्रकार जब सब जलराशि एक आकार हो इस भूमि को चारों ओर से घेर लेती है तब इसका नाम 'अर्णवा' हो जाता है। जिससे सब प्रकाशित होते हैं, जिसके बिना कोई प्रकाश में नहीं आते, जो अपनी व्याप्ति और दीप्ति के कारण चारों ओर फैलाता रहताहै उसको जल कहते हैं। वह जल पूरी पृथ्वी को चारों ओर फैला है और तनू धातू प्रत्युक्त होता है इसलिए अम्भ को तनू भी कहा जाता है। कवियों ने 'अर' इसको शीघ्रार्थ चिन्ह माना है। एकार्णव काल में जल शीघ्रातिशीघ्र नहीं होता इसलिए जल को 'नर या नार' भी कहा जाता है। हजार युग काल परिमाण वाली रात के हो जाने पर जब कि चारों ओर केवल जल ही जल दिखाई देता है और अग्नि के नष्ट हो जाने पर पृथ्वी तल पर चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा छाया रहता है कहीं पर भी प्रकाश नहीं दिखाई देता तब उस सलिल में निवास करने वाले उस प्रभु पुरुष ब्रह्मा के हृदय में पुनः इस लोक को बांटने की इच्छा हुई। स्थावर जङ्गमात्मक सृष्टि के नष्ट होने पर जब उस समय केवल एक मात्र समुद्र ही शेष रह गया है तब केवल इच्छा मात्र से वह ब्रह्मा हजार आंख वाला हजार पैर वाला हजार सिर वाला सोने के समान रङ्ग वाला अतीन्द्रिय हो गया उस समय वे नारायण नामक ब्रह्मा जल में ही सोते थे। ब्रह्मा के हृदय उस समय जब सत्वगुण की वृद्धि हुई तब उनको ज्ञान प्राप्ति हो गई तब उन्होंने चारों ओर केवल शून्य को ही देखा।

नारायण के विषय इस प्रकार का श्लोक प्रसिद्ध है कि जल का नाम

नर तथा तनू है उस जल में वे नाभि तक मग्न होकर रहते हैं इस लिए उनका नाम नारायण पड़ा। इन सहस्र प्राण, मनु, मुख, मस्तक हाथ पैर, आंख और कान वाले प्रजापति पुरुष के विषय में वेदों में विस्तार पूर्वक वर्णित है। यही महात्मा वेद में आदित्य वर्ण, भुवन पालक, प्रथम प्रजापति इन्द्रतम से परे हिरण्य गर्भ और महापुरुष कहे जाते हैं। यही कल्प के शुरू में रजोगुण के उद्रेक होने ब्रह्मा होकर प्रजा की सृष्टि करते हैं और कल्पान्तर में तमोगुण के उद्रेक होने से काल होकर सबको निगल जाते हैं। सत्वगुण के उद्रेक होने से वे एकार्णव में शयन करते हैं, अतः नारायण नाम से प्रसिद्ध हैं वे अपने को तीन भागों में बँटकर त्रिलोकी में विद्यमान रहते हैं। तीन मूर्तियों के द्वारा ये सृष्टि और पालन किया करते हैं। चार हजार युग के बाद जब स्थावर जङ्गम नष्ट हो जाते हैं तब दसो दिशायें जल मय होकर एकार्णवाकार हो जाती है, जब ब्रह्मा काल रूप से चतुर्विध प्रजाओं को निगल कर प्रकाशहीन जलराशि के बीच में नारायण रूप से सोते हैं, तब उन्हें कल्प के महर्लोक वाले भृगु आदि महर्षि लोग देखते हैं। उन महर्षियों ने महान पुरुष का सहारा प्राप्त किया है। गमनार्थक ऋष् धातु से ऋषि शब्द की उत्पत्ति हुई है उसमें भी वे महान् हैं, इसलिए उन्हें ऋषि कहते हैं महर्लोक में स्थिति वे समस्त ऋषि गण उस समय सोये हुये काल को देखते हैं। पहले कल्प में जो सत्य प्रकृति महर्षिगण थे उन्होंने भी काल को इसी प्रकार देखा था। इस प्रकार ब्रह्मा की हजारों रात्रि के बीत जाने पर दूसरे महर्षियों ने भी काल को इसी प्रकार शयन करते हुये देखा है कल्प के आदि में ब्रह्मा ने चौदह संस्थाओं के विभाग की कल्पना की। इसलिए उस काल को कल्प कहते हैं। वही व्यक्ताव्यक्त महादेव कल्प के आदि में सब भूतों की बार बार सृष्टि करते हैं अतः यह जगत् उन्हीं का ही है।

अतीत और वर्तमान काल के मध्य भाग में जो कुछ हुआ है। वही प्रतिसंधि का वर्णन है। मैंने आपसे उस श्रेष्ठ कथा को कहा है हरेक कल्प में जो घटान होती है, उसे भी सूक्ष्म रूप में मैंने कही है। अब तक जो कुछ कहा है वह वर्तमान कल्प का वर्णन है। आपसे मैं साम्प्रत कल्प के सम्बन्ध में सुनाऊँगा।

इति श्रीवायुमहापुराण का प्रतिसन्धि नाम का सांतवां अध्याय समाप्त॥७

आठवां अध्याय

सूतजी बोले—ब्रह्माजी के हजार युग के बराबर रात्रि काल को बिताकर वे आदि पुरुष रात्रि के अन्त में सृष्टि करने की इच्छा से ब्रह्मा जी का रूप धारण करते हैं ब्रह्मा जी उस समय वायु का रूप धारण कर उस अन्धेरे में जब कि स्थावर जङ्गात्मक संसार नष्ट हुआ रहता, सारी पृथ्वी चारों ओर जलमयी रहती है, पंच महाभूतों का विभक्त रूप नहीं रहता अर्थात्पांचों महाभूत अलग २ नहीं दिखाई पड़ते-इधर उधर जल के ऊपर घूमते रहते हैं। वर्षा ऋतु के खद्योत की भाँति वे इधर उधर घूमते रहते हैं परन्तु स्वयंभू हमेशा उसको देखते रहते हैं। उस समय ईश्वर पृथ्वी को जल से बाहर निकालने का प्रयत्न करते हैं। वे उस समुद्र में मग्न पृथ्वी का अनुमान् से ठीक पता पाकर पृथ्वी के उद्धार के लिए प्रयत्नशील हो गये। उन्होंने पूर्व कल्पों का स्मरण कर तुरन्त ही दूसरा शरीर धारण कर लिया तब प्रभू वाराह का रूप धरकर उस समुद्र में घुस गये, और जल में ढकी पृथ्वी को अच्छी तरह देखकर पृथ्वी को जल के ऊपर स्थापित कर दिया। जलको विभक्त कर अलग २ जलाशयों में स्थापित किया। समुद्र जल को समुद्रों में, नदी जल को नदियों में, और पार्थिव जल को पृथ्वी में स्थापित किया पूर्व सर्ग के संवर्त्तक अग्नि से भस्म होने पर उस समय के पर्वत भी पृथ्वी में ही गल कर लीन हो गये थे।

जल प्लावन के समय शीतलता के कारण, वे जहां तहां पहले गड़े हुये थे, वहां वहां वह फिर जमकर स्थिर हो गये। वायु के द्वारा ऊपर का जल भी सूख गया। गतिहीन होने के कारण उनका नाम अचल पड़ा, पर्व के कारण पर्वत, जल से निगले जाने के कारण उनका नाम गिरि, पत्थरों के चुनने के कारण उनका नाम शिलोच्चाय पड़ा। इसके बाद ईश्वर ने जल के भीतर से पृथ्वी का उद्धार कर उसको ठीक जगह पर रख दिया और उसका फिर से विभाग किया। उसके सातों द्वीपों में और हरेक द्वीपों को सात सात सालों में बांट दिया। उन द्वीपों से चालीस साल बने और उतने ही पर्वत हरेक साल में बने। सातों द्वीप, सातों समुद्र, चारों तरफ से घिर कर एक दूसरे के पास हैं।

ब्रह्म जी ने सबसे पहले भू आदि चारों लोकों को बनाया फिर चन्द्रमा, सूर्य तथा ग्रह नक्षत्रों कीउत्पत्ति की। ब्रह्माजी ने सबसे पहले इस कल्प की जगह पर रहने वाले जल, अग्नि, पृथ्वी, वायु, आकाश, स्वर्ग, दिशायें, समुद्र, नदी, पर्वत, रात, दिन, पक्ष, मुहूर्त अलग २ रूप में बनाये। ब्रह्माजी ने कल्पके शुरू में कृतयुगको बनाया। जो मनुष्य तपोलोक में जाने से रह गये वे मनुष्य लोक में ही रह, और वहां पर उन्होंने फिर सृष्टि उत्पत्ति की, वे तपस्या में ब्रह्माजी के मानस पुत्रों के रूप, शरीर रखकर अपने कामों को पूरा करते हैं, अपने कर्म के अनुसार ही जन्म धारण करते हैं, और कर्म के कारण ही वे मनुष्य लोक से इस लोक में आते हैं, वे अपने अच्छे बुरे कामों के फल से ही यहां जन्म लेते हैं अपने कर्म के अनुसार वह हर तरह की योनि में जन्म लेते हैं जिसके जैसे कर्म होते हैं उसको वैसा ही फल भोगना पड़ता है। ब्रह्म जी ने फिर दोबारा मनुष्यों की सृष्टि करने की इच्छा से अपने मुँह में हजारों मनुष्य व स्त्री पैदा किये। उनके सतोगुण के प्रभाव से मनुष्यों में बुद्धि तथा अच्छे विचार उत्पन्न हुये और हृदय में से हजारों स्त्री पुरुषों के जोड़े उत्पन्न हुये। उन मनुष्यों में कुछ विद्वान तथा कुछ अविद्वान भी थे। ब्रह्मा जी ने अपने अरु से

और एक हजार मनुष्यों को जन्म दिया। जिन मनुष्यों में रज तथा तम की अधिकता होने के कारण कामुक भाव पैदा हुए। ब्रह्मा जी के चरणों से पैदा होने वाले मनुष्य क्रोधी तथा कम आयु वाले हुये जो भोग विलास में अधिक तृप्त हुए। भोग विलास की सृष्टि इसी कल्प में शुरू हुई। ब्रह्माजी की जो पहली मानसी सृष्टि हुई। उसी वंश में मैथुन सम्बन्धी सृष्टि पैदा हुई, उस समय स्त्रियों को रजो-दर्शन प्रति माह नहीं होता था। तथा संयोग होने पर भी उनके सन्तान पैदा नहीं होती, जीवन के बुढ़ापे के समय सिर्फ एक लड़का तथा एक लड़की होती थी। वे मरने वाले थे उसी समय से मैथुन सृष्टि पैदा हुई। सत्ययुग के शुरू में वे मनुष्य, नदी समुद्र और पर्वतों के किनारे इधर उधर घूमते रहते थे और वे फल तथा मूल को अधिक खाते थे। उन मनुष्यों में कोई भेद भाव न था वह उम्र तथा रूप में बराबर थे उनका कोई स्थायी घर न था वे अकेले रहते थे उनको न तो कोई शोक था तथा अच्छी प्रकृति वाले थे। उस समय पशु, सांप तथा पृथ्वी पर रेंगने वाले जीव नहीं पैदा हुये और न कोई पापी, अत्याचार करने वाले मनुष्यों ने जन्म लिया था। उस समय खाने की चीज मूल-फल तथा फूलों की कमी थी। परन्तु उनकी इच्छानुसार पृथ्वी के रस पदार्थ मिलते रहते थे उस समय न कोई रोग ही अधिक था और न रोग नाशक दवाइयां मिलती थीं। उनके शुद्ध विचार से दो बच्चे पैदा हो जाते थे वे जन्म और रूप में बराबर थे। उनकी मृत्यु भी साथ ही होती थी। उस समय सत्य, प्रकाश, सुख, क्षमा तथा आचार विचार वाली प्रकृति के ही मनुष्य थे। जनता के रोजगार धन्धे साधारण होते थे। सतयुग में अच्छे तथा बुरे काम करने से प्रजा की उत्पत्ति नहीं होती थी। वे आपस में एक ही समान प्रेम पूर्वक मिलजुलकर रहते थे। उस युगमें सब बराबर छोटे बड़े का कोई प्रश्न नहीं था, उस समय सभी सुखी तथा प्रसंन थे। एक दूसरे से कोई बैर भाव न था। सतयुग में ध्यान अधिक था द्वापर युग में यज्ञ और कलियुग में दान ही सबसे अच्छा पुण्य धर्म था त्रेता में ज्ञानका अधिक

प्रभाव था सतयुग में सतोगुण अधिक रहता है त्रेता में रजोगुण, द्वापर युग में रज तथा तम दोनों ही अधिक रूप में रहते हैं और कलियुग में सिर्फ तमोगुण ही अधिक रहता है। अब मैं सतयुग के काल के बारे में कुछ कथा सुनाऊँगा।

सत्युग में चार हजार वर्ष होते हैं। उसकी संध्या काल का समय आठ सौ वर्ष है। उस युग में प्रजा को आपत्तियों, दुखों तथा मृत्यु का कोई डर न था। उस समय युग की संध्या का समय बीत जाने पर उस युग का चौथाई हिस्सा रह जाता है। अतः सत्युग के खतम हो जाने पर इस युग की सब सिद्धि खतम हो जाती है। उस सत्युग की सिद्धी के खतम हो जाने पर त्रेता युग और द्वापर युग में संध्या काल में दूसरी सिद्धि पैदा होती है सृष्टि के शुरू के युग में आठ प्रकार की सिद्धियां होती हैं। उन सिद्धियों के नाम ये हैं। सतयुग में वह कल्प के शुरू में मानसी सिद्धि है। सब मन्वन्तर में चार हिस्से के अनुरूप अपने २ वर्ण तथा धर्म से आचार विचार से, कर्म से सिद्धियां होती हैं। सत्युग के संध्या काल में युग धर्म का एक पाद, संध्यांश काल में संध्याकालीन धर्म का एक पाद और त्रेतायुग के शुरू में उस संध्यांशकालीन धर्म का एक पाद समाप्त हो गया है और उसी विचार से आयु, बल तथा ऐश्वर्य भी खतम हो जाता है। हे मुनियो! सत्युग और संध्यांशकालीन धर्म को नष्ट हो जाने पर त्रेता युग शुरू होता है जिस समय मनुष्यों में सत्युग की सिद्धि नष्ट हो जाती है उस समय उसमें दूसरी सिद्धि पैदा होती है। उस समय जल की अधिकता भी कम हो जाती है और जल सावन भादों के बादलों के रूप में बदल जाता है और वर्षा से हरी भरी सृष्टि पैदा हो जाती है एक समय भी वर्षा के हो जाने से सब स्थानों पर पेड़ पौधे उग जाते हैं। उससे जनता को तरह २ की वस्तुयें प्राप्त हो जाती हैं त्रेता युगके शुरूमें जन समूह उसीसे अपना गुजर बसर करते हैं इसके बाद धीरे२ अदल बदल शुरु होती है। सतयुग में स्त्रियों की अधिक उम्र के बाद संतान होती थी। लेकिन त्रेतायुग में यह बाद सब खतम हो

जाती हैं त्रेता युगकी स्त्रियां प्रतिमास ऋतुमती होती थीं और बुरे दिनों (अकाल) मेंभी प्रतिमास संयोग करने से सन्तान शीघ्र उत्पन्न हो जाती है। और फिर समय बदलने से मनु य के रहने की जगह में उगे हुये पेड़ पौधे सब नष्ट हो जाते हैं। इससे मनुष्य दुखी होकर पहले सतयुग की सिद्धि का ध्यान करने लगते हैं। उनके सत-युग के ध्यान से दोबारा फिर सब हरे भरे वृक्ष पैदा हो जाते हैं। अतः वे उन्हीं वृक्षों से सब वस्तुयें प्राप्त कर लेते हैं। त्रेतायुग में मनुष्य उसी के द्वारा सब सुख पूर्वक जीवन यापन करते हैं और फिर समय के अनुसार मनुष्य अधिक लोभी और लालची हो गये तथा लोभ के कारण मधु-वृक्ष आदि वस्तुओं को मनमौजी बरबाद करने लगे, इस अनाचार के कारण वे सब कल्पवृक्ष आदि सभी नष्ट होने लगे। उस युग में कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने पर प्रजाओं में अधिक दुख पैदा हो गये। उन्हें सर्दी, गर्मी का दुख भी सताने लगे। और सर्दी गर्मी से दुखी होकर वह लोग कपड़े पहनने लगे। और वे अपनी इच्छा से इधर उधर घूमने वाले बिना घर के रहने वाले वायु ठण्ड और गर्मी के दुख से अपने २ घर बनाकर रहने लगे। अपनी इच्छा से घर बनाकर वह सुख पूर्वक घरों में रहन लगे। और तब उन्होंने पर्वत, नदी, जल की जगह, मठ, ऊचे नीचे सभी जगहों में दुर्ग तथा महल इत्यादि बनाने लगे और गांव नगर महल अन्तःपुर इत्यादि बनाये जाने लगे। उन जगहों की लम्बाई चौड़ाई अपनी बुद्धि से नापकर बनाने लगे। तभी से नाप सूचक यह संज्ञायें निश्चित हुईं। यह तीन संज्ञायें प्रदेश, हस्तकिष्कु, धनु थीं। दस अँगुलियों का एक प्रदेश होता है। अँगूठा से लेकर छोटी अँगुली तक के एक वालिस्त को प्रादेश कहते हैं। बीच की अँगुली के बाद से ताल और तीसरी अँगुली (अनामिका) के अन्त तक गोकर्ण और छोटी अँगुली की एक वित्ता होती है। वितस्ति का परिमाण बारह अगुली का होता है। इक्की अँगुली के पर्वों की रलि और चौबीस अँगुलियों की पर्वों का एक हाथ और व्यालीस अँगुली

का एक किष्कु होता है। चार हाथ का एक धनु होता है। दो हजार धनुओं की गव्यूति होती हैं और आठ हजार धनुओं का एक योजन होता है। इसी नाप के अनुसार उस मनुष्य ने अपने रहने के स्थान बनाये। उन मनुष्यों ने चार तरह के दुर्ग बनाये, तीन दुर्ग तो प्राकृतिक होते थे और चौथा दुर्ग बनावटी होता था। इस बनावटी दुर्ग को इस प्रकार बनाते थे कि जिसमें ऊँचे ऊँचे चारों तरफ से घिरे हुए कोठे, जलाशय तथा दो दरवाजे होते थे। उनकी लम्बाई चौड़ाई आठ दस हाथ की होती थी, गांव नगर और प्राकृतिक दुर्गों की आबादी पर्वत तथा जलों द्वारा बनाते थे। लम्बाई से अधिक चौड़ाई वाले गांव या पुर अच्छा होता है पूर्व तथा उत्तर की दिशा का भाग कुछ नीचा रहना चाहिये। छोटा, घना, गोला, बड़ा तथा छिन्न कर्ण वाला पुर या गाँव खराब होता है। चारों दिशाओं में एक बराबर आकार वाला पुर अच्छा होता है पर सीमा दो कोसों की होती है। और क्षेत्र की सीमा चार धनु की होती है श्रीमान, राज महाराजाओं के राज पथ की लम्बाई चौड़ाई दस धनुओं की होती है उसमें मनुष्य हाथी घोड़े रथ सभी सब सुख पूर्वक चल फिर सकें। उस समय मनुष्य चौराहे की गली को चार धनु की बनाते थे तथा घरेलू गली को दो धनु की और छोटी सी गली एक धनु की बनाते थे।

जिस प्रकार पेडों पर उसकी टहनियां पत्ते इधर उधर फैले रहते हैं उसी तरह लकड़ी को फैला कर उन लोगों ने अच्छे घर बनाये। पेड़ों की टहनी या शाखा की तरह फैले होने के कारण इन घरों को शाला भी कहते थे। शाखा की तरह बनाये जाने से इन्हें गृहशाला भी कहते थे। शाखा शब्द से ही शाला शब्द बना है। मन को खुश करने वाले स्वच्छ और पवित्र घरों का नाम प्रासाद रखा था। उस युग के मनुष्य गर्मी दुख से छुटकारा पाकर अपनी खाने पीने की चिन्ता दूर करने का कोई उपाय सोचने लगे। मधु के साथ ही कल्प वृक्षों का नष्ट हो जाने से वे भूख प्यास से घबडाने लगे।

उस त्रेतायुग में भी सतयुग की तरह उनकी जीविका का साधन करने के लिए वृष्टि रूप सिद्धि पैदा हुई। उस दूसरी वृष्टि रूपी सिद्धि से जो जगह सूख गई थी वहां पर फिर से हरी भरी पृथ्वी हो गई। हरी भर पृथ्वी में सभी प्रकार के फल फूल, पेड़ पौधे तरह २ की दवाइयां तथा अपने खाने पीने की व्यवस्था हो गई। इन सब साधन के सुलभ हो जाने से मनुष्य सुख पूर्वक रहने लगे। तब त्रेतायुग में इस धर्म के अनुसार मनुष्य रोगी और लोभी हो गये और रोगी और लोभी होने से तथा अपनी शक्ति के अनुसार उन मनुष्यों ने क्षेत्र, पर्वत, वृक्ष सब अपने २ कब्जे में करने लगे। सतयुग के पूर्व में ब्रह्मा जी की मानस सृष्ठि के महात्माओं की कथा का वर्णन है। वे यजन से पैदा हुये हैं। वे ही फिर त्रेतायुग में दुबारा जन्म लेते हैं। अच्छे बुरे कर्म के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जाति के मनुष्य पैदा हुये। उनमें से जो अधिक विद्वान, जितेन्द्रिय, बलवान तथा सत्य वचन बोलने वाले गांव और शहरों में रहने लगे। जो कमजोर, गरीब दुर्बल तथा एक दूसरे के सहारे रहते और इनसे दान लेते तथा इनके कर्म करते थे और उनकी सेवा करते थे। उनके इस दोष से सारी सम्पत्ति नष्ट हो गई और अब उस युग के धर्म के अनुसार पृथ्वी की चौदहों प्रकार की सब चीजें लोप हो गईं।

मनुष्य उस समय फल की जगह फूल और फूल की जगह पत्ते तोड़ने लगे इससे उनकी बुद्धि नष्ट हो गई और घबड़ाने लगे। वे सब के सब इकट्ठे होकर ब्रह्माजी के पास गये। तब ब्रह्माजी ने सुमेरु पर्वत को बछड़ा बनाकर पृथ्वी को दुहने लगे, दुहने से पृथ्वी की सारी चीजें जो उस समय लोप हो गई थीं वह सब की सब फिर से निकल आई थीं। पकते समय फल के बीज को औषधि कहते हैं औषधियां सत्रह प्रकार की हैं। त्रेतायुग के शुरू में ये औषधियां पैदा हुईं। ब्रह्मा जी के पृथ्वी दुहने पर जो बीज पैदा हुए, उनसे मौसम के अनुसार फल पैदा हुए। उन्होंने (ब्रह्माजी ने) पृथ्वी पर कुछ अन्न भी पैदा किया। ब्रह्माजी

ने उनके जीविक साधन में बहुत सहायता की। इन मनुष्यों में जो बलवान तथा बड़े आदमी थे उन क्षत्रियों को एक दूसरे की रक्षा करने का काम दिया। जो उन क्षत्रियों के पास निडर होकर जाते तथा जो सत्य बोलने वाले विद्वान लोग थे उनको ब्राह्मण कहा गया। और बुरे २ कर्म करने वाले जान २ कर पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्य को मारने वालों को वैश्य कहने लगे तथा उन्हें साधारण जीविका चलाने के कार्य को दिया। जो दुखी होकर, सोचते हुये इधर उधर घूमते रहते थे उन्हें शूद्र कहते थे। और उन्हें सेवा कार्य करने को कहा। ब्रह्माजी ने चारों जाति के लोगों के धर्म कर्म को निश्चय किया। और वे चारों जाति के मनुष्य अपने २ कार्य ठीक प्रकार से करने लगे। वे धीरे २ अपने २ धर्म तथा वर्ण के नियमों का अनादर करने लगे। प्रजापति ब्रह्मा जी ने उनके अच्छे बुरे कर्मों को देखकर क्षत्रियों को बल, शासन और युद्ध ही जीविका का साधन बनाया। ब्राह्मणों को पठन पाठन करना तथा याजन और पतिग्रह रूप तीन कार्य बतलाये, पशु पालना, खेती करना तथा व्यापार करना वैश्यों को जीविका का उपाय का साधन दिया, और शूद्रों के लिये शिल्प तथा सेवक की वृत्ति दी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के लिये यजन, दान की तथा पढ़ने पढ़ाने की व्यवस्था की। ब्रह्माजी ने उनके कर्मों के अनुसार उनको जीविका देकर लोकान्तर में भी उनके स्थानों का निश्चय कर दिया। इस प्रकार चारों तरह के धर्म और वर्ण के ठीक हो जाने पर प्रजापति ब्रह्माजी ने आश्रमों का स्थान बनाया, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और भिक्षुक नाम के चार आश्रमों पहले बनाया। उन आश्रम में रहने वाले मनुष्य कुछ धर्म इत्यादि को नहीं मानते थे। और ब्रह्माजी से पूँछने लगे कि पृथ्वी पर हमारा क्या कर्त्तव्य है तथा क्या कर्म है, क्या करें। ब्रह्माजी ने तब उन्हें कर्म करने के लिये चार आश्रमों को बतया। प्रजापति ब्रह्मा जी ने मनुष्यों को शिक्षा देने के लिए धर्म, आचार, विचार, यम, नियम का उपदेश दिया।

गृहस्थाश्रम ही चारों आश्रमों के बीच अन्य आश्रमों की उत्पत्ति और स्थिति का कारण बतलाया। गृहस्थाश्रम चारों आश्रमों की जड़ है अब चारों प्रकार के यम नियम इत्यादि आश्रमों का वर्णन करते हैं। गृहस्थाश्रम के चार पांच मुख्य कर्त्तव्य हैं, अतिथिसत्कार, यज्ञ, श्राद्धादिक करना, हवन, अनुष्ठान करना, सन्तानोत्पत्ति तथा स्त्रीपरिग्रह हैं। दंड, मेखला जटाधारण करना, पृथ्वी पर सोना, गुरु की सेवा करना भिक्षा मांगकर अपना पेट भरना ब्रह्मचारियों के मुख्य कर्त्तव्य हैं। वानप्रस्थ वालों का चीर पत्र पहनना तथा कन्द, मूल, फल धान्य इत्यादि खाना नदी या तालाब में दोनों समय डुबकी लगाकर स्नान करना हवन तथा अनुष्ठान इत्यादि करना ये मुख्य कर्त्तव्य हैं। सन्यासियों के लिये ये मुख्य कर्त्तव्य हैं। रातके समय भिक्षा न मांगना चोरी न करना शौच मनुष्यों के प्रति दया, क्षमा गुरु की सेवा करना क्रोध न करना तथा अपनी इन्द्रियों को वश में करना सन्यासियों का कर्म है। ध्यान इन्द्रिय मन का संयम किसी के घर जाकर बिना कड़वे वाक्य कहे। भिक्षा मांगना सन्यासियों का धर्म है। ब्रह्माजी ने अपने मुख से कहा है कि चारों आश्रम कल्याणकारी हैं तथा ये दया, क्षमा योग, व्रत, नियम और अश्रद्धावान मनुष्यों को फलदायक नहीं होते जिसके भीतर श्रद्धा नहीं है वह मनुष्य परिश्रम करके भी सफल नहीं होता। मलीन मन से सब कुछ दान करने पर भी वह धर्म पाने वाला नहीं हो सकता, क्योंकि उसकी भावना शुद्ध नहीं है। देव पितर ऋषि मनु के जो स्थान हैं वही स्थान सन्यासियों के लिये है। अट्ठासी हजार ऊर्द्ध, वरेता ऋषियों के जो स्थान हैं वे ही गुरु जी के पास रहने वाले ब्रह्मचारियों के स्थान हैं। सप्तऋषि जहां रहते हैं वहीं देवताओं को रहने की जगह है गृहस्थी मनुष्य ब्रह्मा के लोक में निवास करते हैं। और सन्यासी ब्रह्मलोक लाभ करते हैं। योगियों के लिये अमर्त नाम का स्थान है किन्तु तरह तरह की बुद्धि वालों के लिये कहीं भी स्थान नहीं है देवयान महापथ के चार पथ हैं ब्रह्माजी ने मनवन्तर के शुरू में देवयानि प्राप्ति के लिये

भूमण्डल में इनको बनाया। सूर्य इन सब पथों के द्वार रुका है इसी प्रकार पितृयान के द्वार को चन्द्रमा कहते हैं। ब्रह्माजी ने उस समय चार प्रकार की सन्तान को उत्पन्न किया। ये धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष जीवन यात्रा के साधन हैं।

ब्रह्माजी के इन पुत्रों ने ही धर्म के अनुसार सन्तान पैदा करके सृष्टि बढ़ाई। स्वाम्भू ने जो पहले मानसी सृष्टि उत्पन्न की वह नाना तरह के रूप रखकर ध्यान करने लगी। जन लोक जो अतीत कल्प में थे वे देवता यहां प्रजा बनकर पैदा हुये। इस प्रकार की प्रजा सृष्टि ब्रह्माजी ने की। प्राणियों के कर्म फल के नष्ट होने पर ही दुबारा जन्म लेना पड़ता है। वे देव, पितर, असुर, सर्प, वृक्ष, पशु पक्षी इत्यादि नाना तरह की योनि में जन्म लेते हैं।

इति श्रीवायुमहापुराण का आठवां चतुराश्रम विभाग अध्याय समाप्त॥८

नवाँ अध्याय

देवादि सृष्टि कथन

सूत जी बोले—प्रजापति ब्रह्माजी के मनन करने से मानसी सृष्टि पैदा हुई। उनके शरीर से क्षेत्रज्ञ समूह पैदा हुआ। श्रेष्ठ स्वयम्भू सृष्टि का कार्य शुरू करने के लिए ब्रह्माजी का ध्यान करने लगे, उनकी सृष्टि में सबसे पहले असुर पैदा हुये। ब्रह्मा जी के जिस शरीर से असुर पैदा हुये उस शरीर को उन्होंने त्याग दिया। वह त्यागा हुआ शरीर तुरन्त ही रात्रि के रूप में बदल गया। वह शरीर तमोगुणी था, इससे रात्रि को त्रियामा कहते हैं। अतः इसी कारण से स्वयम्भू की पूरी प्रजा रात में तमोगुण से ढकी रहती है। ब्रह्माजी ने असुरों को देखकर अव्यक्त और सतगुणों से भरपूर दूसरा शरीर धारण करके ब्रह्मा जी बहुत खुश हुये। फिर ब्रह्माजी के मुख कमल से देवताओं की उत्पत्ति हुई। वे ब्रह्माजी के मुख से होने के कारण

ही देवता कहलाये। ब्रह्माजी ने देवों के भी उत्पत्ति के बाद दूसरा शरीर त्याग दिया। उस त्यागे हुये शरीर को ब्रह्माजी ने दिन बना दिया। इसलिये अच्छे कर्म अनुष्ठान इत्यादि शुभ कार्य दिन में ही होते हैं। फिर ब्रह्माजी ने सतगुण से दूसरा शरीर रखकर दोनों पक्षों के साथ रात और दिन के बीच में पितरों की उत्पत्ति की। इसीलिये उन देवताओं की पितृ संज्ञा हुई। जिस शरीर से ब्रह्माजी ने पितरों को पैदा किया उस शरीर को भी छोड़ दिया। यह छोड़ा हुआ शरीर फिर संध्या के रूप में बदल गया। अतः इसीलिये देवताओं के लिये दिन शुभ होते हैं राक्षसों के लिये रात्रि और पितरों के लिये संध्या समय शुभ होता है। जभी से, ऋषि, देवता, असुर, मनु ब्रह्माजी के संध्या रूप की पूजा करने लगे। ब्रह्माजी ने अपने दूसरे रजोगुण से युक्त शरीर रख कर मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। उन्होंने अपना वह रूप भी छोड़ दिया। और वह त्यागा हुआ शरीर शीघ्र ही प्रकाशमय होगया। इस प्रकाश के पैदा होते ही सब लोग प्रसन्न होगये। जिस जिस शरीर को ब्रह्माजी ने छोड़ा था उससे, दिन रात्रि, संध्या, प्रकाश के रूप में होगये। दिन, प्रकाश तथा संध्या ये तीनों सतगुणों से भरा हुआ तथा रात्रि तमोगुणी है। इसीलिए यह त्रियात्मा कहलाती है। ब्रह्माजी के दिव्य शरीर से पैदा होने के कारण देवताओं को किसी प्रकार के दुख नहीं सताते वह हमेशा प्रसन्न रहते हैं। दिन में उनकी उत्पत्ति होने के कारण वह दिन में अधिक बलशाली होते हैं। और राक्षसों की उत्पत्ति रात में होने के कारण राक्षस रात्रि में अधिक बलशाली होते हैं। देवताओं की राक्षसों की मनुओं की सभी मन्वन्तरों में ऐसे ही उत्पत्ति होती है। दिन, रात, संध्या, प्रकाश की भी इसी प्रकार पैदायश हुई। ब्रम्हाजी ने और जल को ही देखकर, देवता तथा राक्षस, मनुष्य इत्यादि तरह-तरह की सृष्टि को बनाया, ब्रम्हाजी ने दूसरे शरीर को भी छोड़ दिया और फिर रजोगुण से भरा हुआ दूसरा शरीर रख लिया। उस अन्धेरे में

भूख मे तडफ कर उन्होने दूसरी सृष्टि को पैदा किया तब उस सृष्टि के मनुष्य जल कोही खान को व्याकुल होगये जो क्रोधी मनुष्य क्रोध में आकर यह कह रहे थे कि हम जल की रक्षा करते हैं वे मनुष्य राक्षस हो गये जिन मनुष्यो न यहकहा कि हम जल को खाजायेंगे वे बुरे अत्याचारी यक्ष कहलाये ।इस कुप्रिय सृष्टि को देख कर ब्रह्माजी शिरहीन हो गये और वह दुखी होकर उन्हीं के ऊपर चढ़ने लगा। ब्रह्माजी के सिर से हीन होकर उस प्रजा सृष्टि का अहि और सर्प, पन्नग इत्यादि नाम पड़ा। पृथ्वी में सबसे नीचे जहां अँधेरा हो अँधेरा रहता है वही उनके रहने का स्थान है। उस समय ब्रह्माजी को बहुत क्रोध आया, और इसी क्रोध के कारण वह विषधर सर्प कहलाये ब्रह्मा जी के प्रकाश के पीने के कारण गन्धर्वों की सृष्टि पैदा हुई। ब्रह्माजी ने सब सृष्टि को पैदा करनेके बाद पक्षियों की सृष्टि को पैदा किया। उनके मुँह से बकरे की सृष्टि पैदा होती है तथा उदर से गायों की उत्पत्ति की। उनके दोनों पैरोंपे घोड़े मृग ऊँट शरभ इत्यादि की उत्पत्ति हुई। उनके रोमों से फल-फूल-मूल आदि पैदा हुये। सिंह, हिरन, बन्दर, पक्षी, सर्प और उन्दक ये जंगली पशु हैं।

ब्रह्माजी ने कल्प के शुरू में बिजली, मेघ, इन्द्रधनुष वज्र की उत्पति की और अपने शरीर से छोटे छोटे सैकड़ों जीवजन्तु पैदा किये। सबसे पहले ब्रह्माजी ने देवता, असुर, पितर, प्रजा इन चार सृष्टियों का पैदा किया इस सृष्टि के मनुष्यों का जैसा ही कर्म था वैसा ही फल मिला और ये कर्म फल इन्होंने जब जब शरीर पैदा हुआ तब तब पाया। उसी कर्म के अनुसार उनकी प्रकृति में भी अदल बदल हुई इसी से वे अच्छे बुरे कर्म वाले, हिंसात्मक, अहिंसात्मक, झूठ, सत्य बोलने वाले दुराचारी बने। ब्रह्माजी ने पंचभूतों को तरह तरह से मूर्त्ति तथा इन्द्रियों की उत्पत्ति की। हे ब्राह्मणो! कोई मनुष्य के कर्म को कोई देवताओं को कोई प्रकृति को तथा कोई पुरुष आकार के ही स्वभाव को कर्मफल देने वाले कहते हैं।

परन्तु पुरुष आकार, दैव और कर्म ये तीनों ही आदत के अनुसार फल देने वाले हैं। ब्रह्माजी ने कल्प के शुरू के समय में वेद वचन के द्वारा भूत समूह के नाम, कर्म और रूप इत्यादि को बनाया। ब्रह्मा रात्रि के अंत में और दिन के शुरू में पहले काल के वेदों को बनाते हैं। ब्रह्मा जी रात्रि के अन्त में मानसी सृष्टि के द्वारा रोज सवेरे सृष्टि पैदा करने के लिये तैयार रहते हैं। वे रोजाना इसी तरह स्थावर, जङ्गम इत्यादि की उत्पत्ति करते हैं।

ब्रह्माजी ने फिर दस मानस पुत्रों को पैदा किया, उन मानस पुत्रों के ये नाम है। भृगु, पुलस्त्य, मरीचि, अंगिरा, दक्ष, क्रतु, वशिष्ठ, अत्रि, पुलह इत्यादि। ये ही पुराणों में 'ब्रह्माण' नाम से मशहूर हुये। फिर ब्रह्मा जी ने अपने गुस्से में आकर भगवान शिव की उत्पत्ति की। उन्होंने धर्म और संकल्प को भी बनाया। ब्रह्माजी ने सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार इन चारों को अपने ही समान ब्रह्मनिष्ठ पुत्रों को पैदा किया। ये चारों पुत्र संसार से विरक्त होकर दूर चलेगये। ब्रह्माजी अपने पुत्रों को विरक्त देखकर चिन्ता करने लगे। उनके क्रोध से सूर्य की किरण के समान कांतिमयी और आग की तरह जलती हुई एक छाया पैदा हुई। जिसका आधा शरीर स्त्री का और आधा पुरुष का। उस स्त्री के पैदा होते ही चारों तरफ प्रकाश हो गया और पुरुष अदृश्य हो गया। ब्रह्मा ने फिर उस स्त्री की इच्छानुसार अपने को दो रूपों में बांट लिया। एक शरीर स्त्री का और दूसरा पुरुष का शरीर बनाया। अपने उस पुरुष रूपी शरीर को ग्यारह भागों में बांट दिया और उनको बताया कि वह अपना आलस्य छोड़ कर संसार के हित के लिए प्रजाओं की अच्छी व्यवस्था करें। यह सुनकर वे ग्यारह रूप रोने लगे तथा उनके रोने से भगवान शिव का नाम रुद्र पड़ा। ब्रह्मा जी के शरीर से जो स्त्री (देवी) पैदा हुई, उन देवियों के ये नाम हैं। लक्ष्मी, सरस्वती, मेधा, स्वाहा, स्वधा, उमा, हैमवती, षष्ठी, कल्याणी, प्रज्ञा महाभागा, गौरी इत्यादि। उन देवियोंने अलग २ शरीर रखकर सृष्टि पैदा की।

द्वापर युग में ये देवी इन नामों से विख्यात हुईं, दुर्गा, प्रमाथिवी, रेवती, महामाया, कौशिकी, गौतमी, चण्डी, कात्यायिनी, सतीकुमारी, माहेन्द्री, ब्रह्मचारिणी इत्यादि अनेक नाम थे। ये सब उस देव के भेद रूप हैं। यह देवियों का युद्धकालीन स्तव है। जो मनुष्य इन देवियों के नामों को सुनते तथा दूसरों को सुनाते हैं और कीर्तन वर्णन करते हैं उनको कभी दुख नहीं मिलता। अतः देवी भगवती सबकी रक्षा करती है। जिन माताओं के बच्चे जन्म लेते ही मर जाते। तथा पीछे कुछ समय बाद मरते हैं। उनको देवी के कवच का पाठ करना चाहिये। उस महाभागा ने सब मनुष्यों को दुख से छुड़ाया है। ब्रह्माजी के मन से रुचि नाम के पुत्र पैदा हुये और उनके प्राण से दक्ष की उत्पत्ति हुई। आंखों से मरीचि का जन्म हुआ, हृदय से भृगुजी का, माथे से अंङ्गिरा ऋषि का, कानसे अत्रिजी का, उदान से पुलस्त्य का, व्यान से पुलह, समान से वशिष्ठ आदान से क्रतु और उनके क्रतु और उनके क्रोध से रुद्र पैदा हुए। ये बारहों पुत्र ब्रह्माजी के प्राणों से पैदा हुए हैं। ये ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं। और नौ पुत्र भृगु इत्यादि हैं ब्रह्मवादी और गृहस्थी कहलाते हैं। इन बारह ब्रह्माजी के पुत्रों की सृष्टि देवताओं के गुणवाली और क्रियाशील हुई। स्वयंभू ने लोक सृष्टि करने के लिये जो विशेष प्रकृति के दोष हैं, वे ही चन्द्रमा, सूर्य प्रकाश नक्षत्र, ग्रह नदी, पर्वत, समुद्र तथा तरह तरह के आकार वाले गांव और नगर के रूप में बदल गये। उस अदृश्य ब्रह्मवन में ब्रह्माजी रात्रि को वही रहते हैं। वह ब्रह्म वृक्ष अव्यक्त बीज में ही पैदा हुआ है और उसी से बढ़ा है। यह प्राकृत सर्ग ब्रह्माजी का अनुग्रह सर्ग है। वैकृत नाम के छः सर्ग मुख्य हैं। ये सर्ग तीनों कालों में बदलते रहते हैं।

उस ब्रह्म वृक्ष पर समान आकृति वाले दो दिव्य पक्षी रहते हैं। उनमें सिर्फ एक को ही वृक्ष का ज्ञान है। उस सर्वात्मा के सिवाय और कोई नहीं जानता। हे ब्राह्मणो! भूलोक जिसका सिर, नाभि को आकाश, नेत्र को चन्द्रमा, और सूर्य, दिशाओं को कान, तथा

पृथ्वी को चरण मान कर जिसकी पूजा करते हैं। जिनके मुँह से ब्राह्मण छाती से क्षत्रिय उरु से वैश्य और पैरों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई ऐसे ईश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ। श्री शिवजी से सभी अडो की उत्पत्ति हुई ऐसे ईश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ। श्री शिवजी से सभी अण्डों की उत्पत्ति हुई और अण्डों से ब्रह्माजी की तथा ब्रह्म जी ने सब त्रिलोक के रहने वालों को पैदा किया।

श्री वायु महापुराण का देवादिसृष्टि नामका नवां अध्याय समाप्त ॥ ६

दसवां अध्याय

मन्वन्तर वर्णन

श्री सूत जी बोले—ब्रह्म जी ने जिस तरह सारी प्रजा की सृष्टि को पैदा किया। वे प्रजा के मनुष्य किसी भी ठीक स्थान पर जमकर रहने लगे, इससे ब्रह्म जी को अधिक दुःख हुआ और फिर अपने में तामसी सृष्टि पैदा करने की सोची। प्रजा के मनुष्य राजसी ठाठ-बाट को छोड के सतगुण के सहारे हो रहे हैं यह देखकर प्रजापति ब्रह्म जी फिर दुखी होने लगे। फिर उन्होंने तमोगुण को छोड़कर रजोगुण का सहारा लिया। उस रजोगुण से उनका तमोगुण ढक गया। उस छोड़े हुए शरीर से एक मैथुन सृष्टि को दो भागों में बांट दिया। आधा शरीर स्त्री का आधा शरीर पुरुष का बना दिया। स्त्री का नाम शतरूपा रखा था। उस प्राकृतिक और जीवों को धारण करने वाली देवी को ब्रह्म जी ने सृष्टि की इच्छा से पैदा किया। उस कन्या ने जो ब्रह्म जी के आधे शरीर से पैदा हुई थी और जिसका नाम शतरूपा था अधिक वर्षों तक कठिन तपस्या की उसने तेज यश वाले स्वायम्भुव मनु को पति बनाया स्वायम्भुव मनु ने उस अयोनिज शतरूपा को पत्नि रूप में प्राप्त कर उसके साथ विहार करने लगे।

इसी कारण से उसे रति भी कहते हैं। कल्प के शुरू में वही पहला स्त्री पुरुष का संयोग हुआ ब्रह्मा जी ने विराट को पैदा किया और विराट से मनु की उत्पत्ति हुई। प्रतिभाशाली राजा मनु ने शतरूपा के गर्भ से दो उत्तम पुत्रों को पैदा किया। एक का नाम प्रियव्रत और दूसरे का नाम उत्तानपाद था तथा शतरूपा रानी ने दो पुत्रियों को भी जन्म दिया पहली का नाम आकूति तथा दूसरी का नाम प्रसूति था उन्हीं दोनों कन्याओं से सारी प्रजा सृष्टि हुई है। स्वायम्भुव मनु ने प्रसूति का विवाह दक्ष के साथ कर दिया और रुचि के साथ आकूति का विवाह कर दिया। ब्रह्माजी के मानस पुत्र रुचि को आकूति के गर्भ से, यज्ञ और दक्षिणा नामक मिथुन सन्तान उत्पन्न हुई। उस मन्वन्तर में दक्षिणा से बारह पुत्र पैदा हुए। उनका नाम याम रखा गया। यज्ञ को ही यम कहते हैं अतः उसके पुत्रों के होने के कारण उन्हें याम कहना पड़ा। दक्ष ने प्रसूति के गर्भ से संसार की शक्तिरूपा चौबीस कन्याओं को जन्म दिया। वे सभी कमल नयनी, सत्यवादिनी योगमाया और योगपत्नि रूप थीं। श्रद्धा लक्ष्मी, तुष्टि, पुष्टि, मेधा, सिद्धि, कीर्ति, क्षमा, लज्जा, धृति इन सब चौबीस कन्याओं को धर्म ने अपनी पत्नि बनाईं। इनकी कनिष्ठा सती, ख्याति सम्भूति प्रीति, क्षमा, स्मृति, संनति, अनुसुइया, ऊर्जा, स्वाहा और स्वधा इन ग्यारह कन्याओं से इन लोगों ने विवाह किया। रुद्र के साथ सती ख्याति भृगु को, मरीचि के साथ सम्भूति, स्मृति अंगिरा ऋषि को, पुलस्त्य के साथ प्रीति, पुलह के साथ क्षमा, क्रतु के साथ संनति, अत्रिजी को अनुसूया, वशिष्ठ को ऊर्जा तथा स्वाहा अग्नि देव को और स्वधा को पितरों की स्त्री रूप में ग्रहण की। अब इन दक्ष कन्याओंकी सन्तानों का वर्णन करते हैं श्रद्धा ने काम, लक्ष्मी दर्प, धृति ने नियम, तुष्टि से सन्तोष, पुष्टि ने लाभ लज्जा ने विषय शान्ति ने क्षेम सिद्धि ने सुख और कीर्ति ने यश नाम के पुत्रों को पैदा किया।

रति के गर्भ से हर्ष नाम का पुत्र पैदा हुआ। यही धर्म के वंश का हाल है। हिंसा के गर्भ मे निकृति नाम की लड़की और अनृत नाम का पुत्र पैदा हुआ और अनृत को निकृति से भट तथा नटक नाम के दो पुत्र पैदा हुए और दो कन्या पैदा हुईं इन दोनों कन्याओं के वेदना और मया नाम थे। भट को माया से मृत्यु से दुख नाम का पुत्र पैदा हुआ औरनटक को वेदना से दुख नाम का पुत्र पैदा हुआ। इसके बाद मृत्यु को वेदना के गर्भ से जटा, शोक, कोध्र तथा असूया नाम की चार सन्तान पैदा हुईं। वेदना की यह सब सन्तान दुखों से भरी हुई है। ये सभी अमर हैं। इनके दूसरी स्त्री तथा पुत्र इत्यादि नहीं हैं। फिर ब्रह्माजी ने शंकरजी से सृष्टि उत्पन्न करने को कहा. तब शंकरजी ने सती का ध्यान करके मानसी सृष्टि को पैदा किया। शंकर जी के सब पुत्र अपने ही पिता के बराबर गुण वाले तेज, रूप और बलशाली थे, सभी चर्म धारण करते थे. वे पिङ्गलवर्ण, निषङ्गधारी जटिल तथा क्रूर स्वभाव वाले क्रोधी थे इनमें कोई बहुत रूपधारी, कोई भूमि पर रहने वाले कोई आकाश पर रहने वाले कोई अधिक जीभ वाले कोई जीभ विहीन थे।

ब्रह्माजी ने तब शिवजी की सृष्टि देखकर उनसे कहा कि हे शिव जी आप ऐसी प्रजा की सृष्टि नहीं करें, आप मरण शील प्रजाकी सृष्टि पैदा करें यह सुनकर शिव जी ने कहा कि हम मरणशील सृष्टि नहीं करते। हम इस कर्म से अलग होते हैं। आप ही प्रजा की सृष्टि पैदा करें। हमने जो हजार रूप और कुरूप अपनेही बराबर प्रजा को उत्पन्न किया है वे अत्यन्त बलवान देवगण भ लोक और आकाश में रुद्र नाम से प्रसिद्ध होंगे। सब युगों में इनको यज्ञ में से भाग मिलेगा। शिवजी के इस प्रकार कहने पर ब्रह्माजी खुश हुये और शंकरजी से कहाकि हे ईश्वर आपका कल्याण हो। आपने जैसा कहा है वैसा ही उचित है। ब्रह्माजी की आज्ञा से ही सब काम होते हैं। जब से श्रीशिवजी ने प्रजासृष्टि को बन्द कर दिया, महादेव जी की प्रजासृष्टि के मनुष्य देवता, असुर और ऋषियों से भी अधिक तेजस्वी हैं इसी से उनका नाम महादेव पड़ा। उन्होंने ऐश्वर्य से, देवताओं को बल से राक्षसों को तथा ज्ञान से ऋषियों को हरा दिया।

ऋषि बोले—हे मुनिदेव आपने जो महेश्वर के ज्ञान साधन, योग

तप, धर्म की कथा सुनाई है तथा जिस धर्म के आचार विचार से ब्राह्मण को अच्छी गति मिलती है उस कथा को हमें सुनाइये।

वायु बोले—तब शिवजी ने पांच प्रकार के रुद्रों के धर्म की कथा बताई, जो पुराण में महेश्वर धर्म के नाम से कहा है। आदित्य, वसु, अन्वनोकुमार, भृगुवंश के, यम, शुक्र, पितृ, काल तथा तरह तरह के धर्म करने वाले पुरुष उस धर्म का पालन करते हैं। ऋषि आत्मा में मन लगाकर उपासना करते हैं। महेश्वर ने जिस पांचों प्रकार की धर्म की कथा को कहा है उसको हम क्रम पूर्वक कहेंगे। महेश्वर योग के प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार, धारणा और स्मरण ये ही पांच धर्म हैं। उनका लक्षण, ध्यान, प्रत्याहार, धारणा और स्मरण ये ही पांच धर्म हैं। प्राण की विस्तार चाल को ही प्राणायाम कहते हैं। वह तीन प्रकार का है। उत्तम, मध्य, मन्द प्राण के निरोध को भी प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम द्वादस मात्रा से बना है तथा मध्यम प्राणायाम में चौबीस भाजात्मक हैं। और मन्द प्राणायाम द्वादश मात्रा से बना है। प्रमाण और लक्षण ये हैं। बन में रहने वाले पशुओं को पकड़ कर पालने से वह पशु धीरे धीरे कोमलता रखते हैं वैसे इन्द्रियों के लिये प्राण भी कठिन है। ये वन के पशु खाने पीने की कमी के कारण अहिंसक हो जाते हैं वैसे ही प्राण भी योगाभ्यास के वश में हो जाता है। वही प्राण वायु मानस व्यापार द्वारा संयत होने पर मन्द और वश में हो जाता और मनके अधीन होकर जिन्दा रहता है। योगानुष्ठान से जब प्राण वायु वश में हो जाता है। तब उसकी इच्छा से कहीं भी ले जा सकते हैं। प्राणायाम करने वाले ब्राह्मणों के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और वेसतोगुणी हो जाते हैं। व्रत पाठ पूजा, यज्ञ, तपस्या आदि की तरह ही प्राणायाम भी पुण्य है। सौसंवत्सरों के हरएक महीने कुश के आगे के हिस्से से जल पीने से जो फल प्राप्त होता है वही फल प्राणायाम करने से होता है। प्राणायाम करने से दोषों के पाप नष्ट हो जाते हैं। धारणा से पाप का नाश होता है और प्रत्याहार से

विषय का और ध्यान से अनीश्वर गुणों का नाश होता है। अतः योगी मनुष्यों को नित्य प्रति प्राणायाम करना चाहिए इस से वह शुद्धात्मा होकर ईश्वर को प्राप्त करता है॥

श्री वायु महापुराण का दसवां अध्याय मन्वतर नामका समाप्त

---

* अध्याय ग्यारहवाँ *

पाशुपत योग

वायु बोले – ये महर्षि, मास, संवत्सर अहोरात्रि तथा हजारों युगों तक तपस्या करते हुये अपनी दिव्य आंखों से प्राण की उपासना करते हैं। भगवान ने स्वयं अपने मुँह से प्राणायाम के फल प्रयोजन को कहा है वह अब हम आप से कहते हैं। शान्ति, प्रशान्ति, दीप्ती और प्रसाद ये चारों प्राणायाम के प्रयोजन हैं। शान्ति से इस युग तथा पहले युग में माता पिता द्वारा तथा भाइयों द्वारा किये हुये किसी दुख के फल से जो पाप पैदा होते हैं वह सब नष्ट हो जाते हैं। इस लोक परलोक में अपने अच्छे के लिये लोभ और क्रोध घमंड इत्यादि का जिससे नाश होता है उसे प्रशान्ति कहते हैं। तपस्या करने वाले योगी के जिस प्रतिबुद्ध स्थिति में ज्ञान से युक्त और शृषियों की तरह चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, तारावली इत्यादि इनका विषय सामने हो उसे दीप्त कहते हैं। और प्रसाद से इन्द्रिय, मन, पंचवायु प्रसन्न होते हैं। यह चार तरह का पहला प्राणायम धर्म है। यह शुभ फल देने वाला तथा काल का डर दूर करने वाला है। इसके बाद योगियों के योग आसन तथा लक्षण का हाल कहते हैं। पहले ओंकार का नाम लेकर चन्द्रमा और सूर्य को नमस्कार करे फिर किसी आसन को मजबूत भाव से लगा कर एक समान हो दोनों पैरों को बराबर मिलाकर लिंग अथवा अण्ड कोष को कुछ निपिडित करके गर्दन तथा सिर को कुछ ऊपर उठाये।

फिर आँख और मुँह को बन्द करके बैठे। अपनी नाक की आगे के भाग पर दृष्टि जमाले। तमोगुण को रजोगुण से और रजोगुण को तमोगुण से ढक ले तब सतोगुण का ध्यान करके एक चित्त होकर योगानुष्ठान करे इन्द्रियों, मन और पंचवायु को समवाय द्वारा वश में करके प्रत्याहार करे। योगी बाहर भीतर से शुद्ध होकर प्राणायाम काल में वायु द्वारा नाभि से लेकर गले तक पूर्ण करके प्रत्याहार करे। इस तरह जो योग करता है उसे ऐश्वर्य मिलता है वह अपने प्रकाश से परमात्मा का दर्शन करता है प्राणापानादि वायु के निरोध को प्राणायाम कहते हैं और मन की धारणा को धारण कहते हैं विषयों से छुटकारा पाने के लिये प्रत्याहार कहते हैं इन सब की ठीक तरह से सिद्धि होने को योग लक्षण कहते हैं। उससे पैदा किया हुआ योग सिद्धि का लक्षण ध्यान है चन्द्रमा और सूर्य के बराबर योगी मनुष्य अपने को देखता है योगी मनुष्य को शुद्ध होकर ग्यान पूर्वक योग साधन में मन लगाना चाहिए। इससे उनको कोई दोष पैदा नहीं होते।

मन में पर्वत और पृथ्वी को धारण कर हृदय में देवता की इच्छा करे योगी हजार जल के घड़ों से भी स्नान करे। कण्ठ मात्र जल में बैठ कर शिर में धारण करे। योगज रोग होने पर इस तरह का इलाज करना चाहिए। योग सम्बन्धी बातों को किसी से नहीं कहनी चाहिए सतगुण की अधिकता योग की सिद्धि पर ये बातें होनी सम्भव है। सतगुण की अधिकाई, सुन्दर मीठी आवाज, सुखी शरीर, लोभ नहीं आता क्रान्तिमय शरीर, मूत्रपुरोषीष की कमी यह सब पहली योग सिद्धि में होती हैं।

इति श्री वायुमहापुराण का पाशुपत योग नामका
ग्यारहवां अध्याय समाप्त॥ ११

———

बारहवाँ अध्याय

योगोपसर्ग

सूतजी बोले—सब प्रकार से सम्पन्न योगियों को जो उपसर्ग नामक रोग होता है, अब हम उसका हाल तुम्हें सुनाएंगे। मनुष्य की तरह, तरह तरह की इच्छा, स्त्री संग, पुत्र की कामना विद्यादानी अन्य तपस्या इत्यादि में योगी पुरुष आसक्त हो जाते हैं तब उन्हें उपसर्ग रोग पैदा होता है। प्रति दिन एकचित्त होकर योगाभ्यास करने से ये दोष नष्ट हो जाते हैं। दूर की आवाज सुनने वालों की शक्ति, देवताओं का दर्शन और अभ्रान्ति को सिद्ध की लक्षण कहा गया है। सब भाषाओं का ज्ञान और विद्या का ज्ञान सुनने योग्य शब्दों को सौ योजन दूर से भी सुनलें वह योग प्रभाव का लक्षण है। सिद्धी प्राप्त करने वाले तेजस्वी योगी मनुष्य को आत्म जनित दोष और उपस्थित उपसर्गों को दूर करना चाहिये। इन्द्रिय को जीतने वाले योग युक्त योगी उन्हें फिर प्राणसंज्ञक उपसर्ग होता है पृथ्वी की धारण करने पृथ्वी के गुण उसमें छोटे रूप में प्रवेश हो जाता है योगी उस समय अपने रोज पृथ्वी के समान समझे उनके ऐसा करने से उनके शरीर से उत्तम गन्ध आती है। जल को धारणा करने से जल का कण उसमें प्रवेश करता है और अमृत के समान ठंडा सूक्ष्म रस उसके शरीर से बहने लगता है। जो ब्राह्मण सूक्ष्म भूत समूह का त्याग करते हैं। वे परम तत्व को प्राप्त करते हैं तो वे दिव्य आंखों वाले महर्षि भी सूक्ष्म भाव को समूह में लिप्त होने के कारण दोष से दुष्ट हो गये हैं इसलिये सूक्ष्म भाव समूह में अकले निष्ठावान नहीं होना चाहिये और ऐश्वर्य से राग उत्पन्न होता है और विराग को ब्रह्म कहते हैं। ब्रह्माजी के गुण तत्वों के जानने वाले व्यक्तियों ने श्री संकर जी के छः तत्वों को इस तरह बताया है। सर्वज्ञता, तीप्त, अनादि बुद्धि, स्वतन्त्रता नियत अविनश्वर शक्ति और अनन्त शक्ति हैं। जो योगी मनुष्य ईश्वर को ही सब कुछ समझते हैं। उससे उनके सभी उपसर्ग रोग शान्त हो जाते हैं।

योगी मनुष्य अपनी योगविद्या से तीनों लोकों को कंपा सकते हैं। एक शरीर छोड़कर दूसरी शरीर में प्रवेश कर सकते हैं। मन सब योगों का द्वार है। सूर्य को भी योग का द्वार कहते हैं। ये इन्द्रियों का आदान करते हैं इससे उनको आदित्य कहते हैं। इस रीति से योगी विषय से विरक्त होकर सूक्ष्म तत्वों को त्याग करके और प्रकृति का नाश करके रुद्रलोक में निवास करते हैं। सब गुणों से सम्पन्न हो ब्रह्मत्व को प्राप्त करता है। ब्राह्म गुण से योगी ब्रह्म की साधना करते हैं। वे ही ईश्वर सब कार्यों के करने वाले हैं। उनमें जिनकी आसक्ति हो जाती है वही सिद्ध हाजाता है। सबों को छोड़ कर योगी को नित्य ब्रह्म की साधना करनी चाहिये।

इति श्री वायु महापुराण का योगोत्सर्ग नामका बारहवाँ अध्याय समाप्त १२।

तेरहवां अध्याय

योगेश्वर्य निरूपण

वायु बोले—हे ऋषियो! अब हम उस कथा को कहेंगे, जिसमें योग के ऐश्वर्य विस्तार का वर्णन है। योगियों के लिये आठ प्रकार का ऐश्वर्य बताया गया है। उन्हें हम इस प्रकार कहते हैं आप सब एकचित्त होकर सुनिये। अणिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकम्य, ईशित्व वीशत्व और कामवसायता। यह सार्वकामिक ऐश्वर्य भी कई तरह के होते हैं। जैसे सावद्य निश्वद्य और सूक्ष्म। सावद्य नाम के जो तत्व हैं, वे पंचभूतात्मक हैं। निखद्य भी पंच भूतात्मक होते हैं। स्थूल इन्द्रिय, मन और घमंड, अहंकार तथा पूरी आत्मख्याति आठ ऐश्वर्यों की तीन प्रकार की प्रवृति हैं। त्रिलोकी में जितने भी जीव जन्तु है वह सभी योगी के वश में हो जाते हैं। जिसको अणिमा ऐश्वर्य प्राप्त है। जो सम्पूर्ण संसार में दुर्लभ है उसे भी योगी अपनी अणिमा योगबल से सहज में प्राप्त करलेते हैं। दूसरी लघिमा ऐश्वर्य योगी सब स्थानों में चले जाते हैं। वे उस ऐश्वर्य के प्रभाव से आकाश में भी उड़ सकते हैं तथा पानी में भी तैर सकते हैं। तीसरी प्राप्ति ऐश्वर्य से तीनों लोकों की चीजों को प्राप्त कर सकते हैं। चौथी प्राकाम्य ऐश्वर्य से अपनी इच्छा से विषयभोग कर सकते हैं। उन्हें कहीं

के लिये शोक नहीं है। महिमा से एक जगह रहकर भी तीनों लोकों की चीजें प्राप्त हो जाती हैं। छठी ईशित्व के प्रभाव से पूरे संसार के सब दुख सुखों के सामर्थ्यवान होते हैं। और वशित्व से सब संसार वश में हो जाता है। काम अवसायिता के प्रभाव से योगी की इच्छा से सभी काम सिद्ध होजाते हैं वे सभी अपनी स्थिति में अपनी इच्छा से सब कार्य पूरा कर सकते हैं। वे विषय भोग करते हैं लेकिन विषय में लिप्त नहीं होते। व्यापक और अपवर्ग के कारण से वे पुरुष कहे जाते हैं। पुरुष सूक्ष्म भाव के ऐश्वर्य के चारों तरफ स्थिति हैं। उत्तम योग के प्रभाव से मनुष्य परम सूक्ष्म अपवर्ग नामके परम पद प्राप्त करते हैं

इति श्री वायु महापुराण का योगेश्वर्य निरूपण नाम का
तेरहवां अध्याय समाप्त ॥१३॥

चौदहवां अध्याय

पाशुपत योग निरूपण

वायु बोले—ब्रह्मा जी के तत्व ज्ञान से रहित मनुष्य राजसी और तामसी कर्मों के आचरण से फिर उन्हीं में मिल जाते हैं। और अच्छे कर्म करने वालों को स्वर्ग मिलता है। वे फल मिलने के बाद फिर नष्ट होकर मनुष्य योनि में पैदा होते हैं। इसीलिए जो बहुत छोटा परब्रह्म है वह सब जगह रहते हैं उन्हीं की उपासना करनी चाहिए उसी में सब सुख मिलते हैं। अधिक महनत और अधिक पैसा खर्च करने से यज्ञ पूरा होता है। किन्तु उससे भी मृत्यु टलती नहीं। इसलिए मोक्ष ही सर्व श्रेष्ठ है। योगी पुरुष योग के बल से ही परम पुरुष के मुख, स्वर्णवर्ण, सर्वव्यापी शुचि और अचल प्रकाशमान रूप का दर्शन करते हैं। वही परम पुरुष भगवान उस अलौकिक तेज से प्रकाशमान है। जिनके पाणि, पाद, उदर, पार्श्व और जीभ नहीं है फिर भी बिना आंखों के सब कुछ देखते हैं। बिना कानों के सब कुछ सुनते हैं। ये सब कुछ जानते हैं परन्तु इन्हें वेद भी नहीं जान पाते हैं। इसी सर्वत्र, अतिसूक्ष्म, सचेतन को परम पुरुष

परमात्मा कहते हैं। ऋषियों को पूरे, लोकों और जीवों की उत्पत्ति को पैदा करने वाला कहा हैं। योगी इन्हीं की उपासना करते हैं। यह सभी जगह, विद्यमान है इनके आंख, कान, हाथ, पैर, सिर सभी जगह हैं और सब स्थान इनसे ढके हुए हैं। जिस तरह वायु सब स्थानों में बहती है। उसी तरह सब भूतों के हृदय आकाश रूपी पुर में सोने से वह पुरूष कहलाते हैं जो जीव धर्म विहीन होकर अपने कर्म के प्रभाव से वह बार-बार पैदा होते और मरते हैं। गर्भावस्था में पहले वे कलल रूप में रहते हैं फिर कुछ समय बाद कलल रूप से बुदबुद रूप में बदल जाते हैं। जिस तरह कुम्हार चाक पर घुमाघुमा कर तरह तरह के मिटटी के बर्तन बनाता हे उसी प्रकार वायु से बढ-कर आत्मा भी अस्थियुक्त होकर तरह तरह के रूप रख कर मनुष्य रूप में पैदा होता है। सभी चीजों ने वायु का ही सहारा लिया है। वायु से जल होता है और जल से प्राण। और प्राण से वीर्य पैदा होता है। जब गर्भाशय में तैतीसवाँ भाग रज का और चौदहवाँ भाग वीर्य जाता है तब गर्भ बनकर पंच वायु से ढक जाता है। पिता के शरीर की तरह उसके रूप और हरएक अंग बनते हैं। तथा मां के खाने पीने पतले द्रव्यरस के द्वारा जो नाभिछेद से वहां तक पहुँचता है वहीं पर मनुष्य का प्राण रहता है। वह नौ महीने तक आश्रय हीन होकरपैर से लेकर सिर तक बंधे हुए की तरह पड़ा रहता है। अतः इसी प्रकार उलटे मुँह होकर वह योनि छिद्र से पैदा होता है। फिर पूर्व जन्म के पाप के कारण नर्क में जाता है। असिपत्र वन और शाल्मली नरक में उसको छेदते हैं। उसे खून आदि का भोजन करना पड़ता है। जि१ तरह पानी अलग अलग होकर अलग २ रूप रख लेता है उसी तरह अलग अलग करने पर जीवगणों को यातना के जगह में अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। पूर्व जन्म के किये गये पापों के द्वारा दुखी होने पर आखिरी में दुख तथा सुख प्राप्त होते हैं। यमपुर में अकेले ही जाना पड़ता है और अपने कर्म का फल भी अकेले ही भोगना पड़ता है। इसी लिए अच्छे अच्छे पुण्यों को ही करना चाहिए।

ब्रह्माजी से लेकर पिशाचों तक सतगुणी सृष्टि हैं। इनकी जगह स्वर्ग में है। ब्रह्मा की सृष्टि सिर्फ सतोगुण से भरी हुई है और स्थावर में केवल तम है। शरीर रूपी मनुष्य हमेशा दुखों से पीड़ित रहते हैं। जिससे उनका हृदय टूक टूक हो जाता है। तब वे ईश्वर को याद नहीं करते। पहले जन्म के सकट और अच्छे भावों से ही प्रेरित होकर मनुष्य शरीर धारण करता है। अतः उसको हट समय भगवान के रूप का ध्यान करना चाहिये।

इति श्री वायु महापुराण का पाशुपतयोग निरूपण नामका चौदवां अध्याय समाप्त ॥१४॥

पन्द्रहवां अध्याय

पाशुपत योग निरूपण

वायु बोले—संसार के डर से मनुष्य को चौदहों तरह के संसार चक्र को जानता हुआ संसार के कर्मों को पूरा करना चाहिये, समय के बदलने पर भी वह संसार को याद करता है और उसमें आसक्त रहता है। अतः इसीलिये योगी पुरुष को हमेशा ध्यानपूर्वक योग से शुरू योगाराधन करके ईश्वर का दर्शन करना चाहिये। यही आत्मा परम ज्योतिर्मय है। अतः सागर रूपी संसार से पार जाने का यही सबसे उत्तम उपाय है। आत्मा के प्रकाशमय होने पर प्राणी का बार बार मरना तथा जन्म लेना बन्द हो जाते है अतः उन्हें मोक्ष मिल जाती है। अतः इसीलिये इस नियम को जानने वाले योगी पुरुषों को सब भूतों में रहने वाली आत्मा की उपासना करनी चाहिये। योगी पुरुष स्नान से पवित्र हो शुद्धात्मा से हवन की अग्नि में आठ आहुति का हवन विधि पूर्वक करके एकबार जल से आचमन करे। ऐसा करने से पहली आहुति प्राण के लिये है और दूसरी आहुति अपान के लिये है तीसरी आहुति समान के लिये, चौथी आहुति उदान के लिये हैं तथा पांचवीं आहुति व्यान के लिये है। सबसे आखिरी में स्वाहा भी करनी चाहिये और इस तरह हवन के

वचे हुए कुछ अन्न को इच्छानुसार खाले और एक वार जलपिये और तीन वार आचमन करनी चाहिए। "हमारी जो आत्मा है वही प्राण की गांठ है। और संहार करने वाले श्री शिवजी ही आत्मा हैं। और श्री शिव हमारे प्राण की आत्मा को तृप्ति दें। आप देवों में बड़े हैं। बुद्धिमान, चतुर तथा नादिया आपका वाहन है। आप हमें मृत्यु से मोक्ष देने वाले हैं। अतः यह हवन में दी गई हमारी आहुति मगलमय हो"। इस प्रकार कहकर अपने हृदय पर हाथ रखे। और फिर सीधे पैर के अंगूठे को सीधे हाथ से छुए और सीधे हाथ से नाभि को छूकर आत्मा को छूनी चाहिए। शरीर के दोनों कान, दोनों आंख, नाक तथा सिर को भी छूना चाहिए। प्राण और अपान दोनों को आत्मा कहते हैं। इनमें प्राण को भीतरी आत्मा तथा अपान को वाहरी आत्मा कहते हैं। अन्न ही मनुष्यों के लिये प्राणदान है और अन्न के न मिलने पर ही मनुष्य की मृत्यु निश्चय है। अन्न से ही सारी सृष्टि पैदा होती है और अन्न से ही उसका पालन होता है पूरे संसार के प्राणी जीव अन्न से ही बढ़ते हैं देवता, राक्षस, पिशाच इन सब को हवन की अग्नि की आहुति में से भाग मिलता है॥

इति श्री वायु महापुराण का पाशुपत योग निरूपण नामका पन्द्रहवां अध्याय समाप्त। १५॥

सोलहवाँ अध्याय

शौचाचार लक्षण निरूपण

वायु बोले :– हे ऋषिओ हम तुमको शौचाचार लक्षण की कथा को सुनाते हैं, जिस के अनुष्ठान करने से मनुष्य को स्वर्ग मिलता है। ऋषियों के लिये स्नानादि से पवित्र होने के लिये जल सबसे अच्छा साधन है जिन ऋषियों को इसमें आलस्य नहीं होता उन्हें कभी दुख नहीं भोगना पड़ता।

मनुष्य के लिए आदर और अनादर दोनों ही विष और अमृत के बराबर हैं जो ऋषि गुरूजी के कार्य करने में कभी भी आना कानी नहीं करते वह ऋषि हमेशा सुख पूर्वक निवास करते हैं। जो ऋषि अपने गुरू की आज्ञा का धर्म पूर्वक पालन करते हैं। उनके कहे के अनुसार चलते हैं वे ऋषि इस लोक में सुख भोगकर परलोक में सुख भोगते हैं। पानी को हमेशा छान कर पीना चाहिए सत्य तथा मीठे वचन बोलना चाहिए, रास्ते में देख कर चलना चाहिए। योगी मनुष्य को किसी एक ही घर में रोज भिक्षा लेने नहीं जाना चाहिए। जिस घर के चौके की आग बुझ कर ठंडी हो जाय और उस घर के स्त्री, मनुष्य खाना खा लें तब उस घर से भिक्षा लेनी चाहिए। आचार विचार वाले गृहस्थियों के यहाँ से योगियों को भिक्षा मांगना सबसे उत्तम है। और इसके अलावा अदुष्ट और न अपतित के यहाँ से भी भिक्षा मागनी चाहिए, लेकिन शूद्रों के यहाँ से भिक्षा मांगना योगियों के लिये अशुद्ध है। भिक्षा के रूप में जो कुछ भी वस्तु मिले सब योगियों के लिए श्रेष्ठ है। योगियों के लिये सब से अच्छा चान्द्रयण व्रत है। योगी मनुष्य को अपनी शक्ति के माफिक कई बार चान्द्रायण व्रत को करना चाहिये। योगी मनुष्यों के लिये चोरी न करना, इन्द्रियों का दमन करना त्यागना ब्रह्मजारी व्रत धारण करना इत्यादि ये व्रत हैं। योगिय के लिये ये नियम मुख्य हैं। गुरूजी की सेवा करना, नित्य स्वाध्याय करना, आचार विचार से शुद्ध रहना क्रोध,नहीं करना, किसी जीव की हिंसा नहीं करना चाहिये।

जिस तरह जंगल के हाथी अंकुश के वश में हो जाते हैं उसी तरह यह शरीर कर्म के अनुसार शुद्ध ज्ञान योग में जलकर पाप से रहित हो कर शुद्ध हो जाता है। कर्म के वन्धन से छुटकारा पाकर जीव को मोक्ष मिल जाती है। वेदों की तरह यज्ञ की भी पूरी क्रियायें हैं ज्ञानी मनुष्यों के द्वारा यज्ञ में जप ही करना सबसे अच्छा है। ज्ञान से भी ऊँचा ध्यान है।

इस ध्यान को नियम पूर्वक करने से ईश्वर प्राप्त होते हैं। सतोगुणी मनुष्यों का कहना है कि सत्य, दम, शम निष्पाप और सब जीवों पर दया और सहज में ही इन्द्रियों का ज्ञान प्राप्त होता है। जो हर समय समाधि में तैयार रहते हैं तथा अप्रमादी, ब्रह्मानिष्ट और इन्द्रियों को जीत सकने वाले हैं ऐसे ही योगियों को यह मिलते हैं। अतः इसी तरह सर्वश्रेष्ठ और अच्छी शुद्ध बुद्धि वाले योगियों को ही ऐसे योग प्राप्त होते हैं।

इति श्री वायु महापुराण का शौचाचार लक्षण-निरूपण नामका सोलहवां अध्याय समाप्त ॥१६॥

---

* सत्रहवाँ अध्याय *

परमाश्रम विधि का कथन

वायु बोले—गुरुजी की आज्ञा से संवत्सर के आखिरी भाग में तीनों आश्रमों को त्याग कर चौथे आश्रम में घुसना चाहिए। और सब ज्ञान की उपासना और ब्रह्म प्राप्ति करके पृथ्वी में घूमता रहता है। असन्तुष्ट होकर यह जानने की कोशिश करता है कि ज्ञान क्या है और ज्ञेय क्या है ऐसे मनुष्य हजार वर्षों में भी यह ज्ञान पैदा नहीं होता योगी मनुष्य अपनी इन्द्रियों को जीत, क्रोध को त्याग कर थोड़ा भोजन करे तथा सब इन्द्रियों के द्वार को बन्द करके मन में प्रवेश करें और निर्जन स्थान में जो ऊपर से खुला हुआ हो और नदियों के किनारे रेत में आसन लगा कर विधि पूर्वक अनुष्ठान करे। तीन दण्ड होते हैं जिनमें पहला बाग्दंड दूसरा कर्मखंड तथा तीसरा मनोदंड है। जिस योगी पुरुष के पास तीनों दण्ड होते हैं। उनको त्रिदण्डी कहते हैं। जो मनुष्य आचार विचार से युक्त ध्यान पूर्वक कर्त्तव्यों का पालन करते हुए अच्छे बुरे कर्मों का त्याग करके मरता है वह बार बार शरीर धारण नहीं करता अतः वह बार बार न जन्म लेता न मरता है।

इति श्री वायु महापुराण का परमाश्रम विधि कथन नामका सत्रहवां अध्याय समाप्त ॥१७॥

* अठारहवाँ अध्याय *

यतियों का प्रायश्चित विधान कथन

वायु बोले – हे ऋषियो, इस कथा के बाद अब मैं यतियों के प्रायश्चित की कथा को विधि पूर्वक आपसे कहूंगा। मामूली धर्म जानने वालों ने काम और अकाम दोनों ही पापों के लिये प्रायश्चित करना बताया है। शरीर, मन और वचन से तीन तरह के पाप पैदा होते हैं। यह संसार हमेशा इन तीनों पापों से जकड़ा हुआ है। जीवन के समय में ये पाप थोडे ही दिनों के लिए आते हैं। अतः विपत्ति काल में हमेशा मनुष्यों को धीरज रखना चाहिये, क्योंकि योग ही सबसे बड़ा वल है। मनुष्यों के लिये योग से दूसरा कोई उपाय नहीं है। इसलिए ब्राह्मण इस योग को श्रेष्ठ बतलाते हैं। धैर्यवान पुरुष विद्या के वल से अविद्या को दूर कर उत्तम ऐश्वर्य का लाभ उठाते हुये पर अपर को साक्षात करते हैं। और उन्हें परम पद प्राप्त होता है। साधू महात्माओं के लिए जो व्रतादि बतलाते हैं उन में से एक भी खंडन होने पर प्रायश्चित करना पड़ता है। साधु अगर कामके वशीभूत होकर स्त्री संग करले तो उसे प्रायश्चित करना पड़ता है ऐसी स्थिति के बाद साधु को प्राणायाम करके तथा व्रतादिक नियम करके अपने आश्रम में जाकर भिक्षादि करनी चाहिये। वेदों में कहा है कि हँसी मजाक के समय झूठ बोलने से कोई दोष नहीं होता किन्तु दिन रात में कम से कम एक दो बार झूठ बोलना, हँसी मजाक में अधर्म नहीं है अधिक झूठ नहीं बोलना चाहिये। वेदों में और देवता तथा मुनियों ने हिंसा को सबसे बड़ा पाप बतलाया है। सब पापों में हिंसा सब पापों से बढ़कर है। मनुष्यों का प्राण धन है जो मनुष्य धन को चुराता है वह उस के प्राणों को चुराता है। इन पाप कर्मों को करने वाला दुष्टात्मा साधु अपने व्रत आदि से अलग होकर अधिक दुख प्राप्त करता है। अतः ऐसे साधु को शास्त्र के अनुसार सवत्सर तक चान्द्रायण व्रत करना चाहिये। और फिर संवत्सर के आखिरी में पाप से रहित होकर शुद्ध मन होकर भिक्षा मांग कर खावे। किसी जीव की साधु पुरुष को हिंसा नहीं करनी चाहिये।

इन्द्रियों की कमजोरी से यदि किसी साधु को स्त्री के देखने से ही वीर्य पात हो जाय तो उसे सोलह प्राणायाम करने चाहिये। और ब्राह्मण मनुष्य को दिन में वीर्य पात होने पर तीन रात्रि तक व्रत करके सौ प्राणायाम करने चाहिये तथा रात्रि में वीर्य पात होने पर शीघ्र स्नान करके बारह बार प्राणायाम करना चाहिये। प्राणायाम से ब्राह्मण, साधु, शुद्ध और पाप से रहित हो जाते हैं यतियों के लिए एक तरह का अन्न खाना भी मना है उसको हमेशा भिक्षा में तीन चार मिले अन्न को मिला कर खाना चाहिये। कभी भूल से इनमें एक भी अन्न यदि यति खाले तो उसे प्रायश्चित करना पड़ता है। मन वचन से जो पाप हो जाय तो उन पापों के प्रायश्ति के लिये विद्वानों से सलाह लेनी चाहिये जैसा वे कहें वैसा ही करना चाहिये। मिट्टी के टुकड़े और सोने के ढेर को एक बराबर समझने वाला और सब प्राणियों पर दया भाव रखने वाला उस परम पद को प्राप्त करता है। जहाँ से वह फिर कभी वापिस नहीं आता है।

इति श्री वायु महापुराण का यतियों का प्रायश्चित विधान कथन नामका अठारहवां अध्याय समाप्त ॥१८॥

उन्नीसवां अध्याय

अरिष्ट निरूपण

वायु बोले–जिस विशेष ज्ञान से योगी मनुष्य अपनी मृत्यु को भी जान जाते हैं। अब हम उन अरिष्टों की कथा को कहेंगे आप लोग ध्यान पूर्वक सुनिये। जो मनुष्य ध्रुव को अरुन्धती को और सोम की छाया तथा इस महापथ को नही जानता वह एक साल से अधिक जिन्दा नहीं रहता है। जो मनुष्य सूर्य को बिना किरण के देखता है और आग को किरण की तरह देखता है। वह ग्यारह महीने से अधिक नहीं जीता है जो सपने में या साक्षात में ही मल मूत्र करदे या सोना चांदी वमन करता है वह दस महीने से अधिक जिन्दा नहीं रहता है।

धूल या कीचड़ में जिसका पैर आगे या पीछे से खंडित होता मालूम पड़े तो सात महीने से अधिक नहीं जीता। जिसके ऊपर दस बीस कौये घूमते फिरते हों और कभी जभी कौआ सिर पर बैठ जाय तो वह चार पांच महीने से अधिक नही जिन्दा रहता है जो बिना बादलों के बिजली देखें, दक्षिण दिशा में और जल में इन्द्र धनुष देखें, वह दो तीन महीने से अधिक नहीं जीता। जिसको अपनी परछांई जल में या शीशे में नहीं दिखाई देती या बिना सिर के दिखाई देती है वह एक महीने से अधिक नहीं जिन्दा रहता। जिसके मुँह या शरीर से मुर्दों की सी दुर्गन्ध आती हो वह पन्द्रह दिन से अधिक नहीं जीता। नहाने के बाद तुरन्त जिसके दोनों पैर और हृदय सूख जाँय तथा सिर से धुआं निकलने लगता है वह दस दिन से अधिक नहीं जीता है खराब वायु मर्म स्थान में दुख पहुँचावे तो उसकी मृत्यु जरूर होती है। जो मनुष्य सपने में बन्दर और भालुओं को रथ पर बैठ कर दक्षिण की तरफ जाते हुए देखता है वह भी जल्दी ही नष्ट हो जाता है। यदि काली स्त्री काले कपड़े पहन कर गाती हुई दक्षिण दिशा को जाती हुई जिस मनुष्य को सपने में दीखती है वह मनुष्य भी अधिक जिन्दा नहीं रहता है

जो मनुष्य बुरे बुरे सपने देखते हैं जसे अग्नि, भस्म, सांप और सूखी हुई नदी वह मनुष्य दस दिन से अधिक नहीं जिन्दा रहता है। सपने में काला भंयकर शक्ल का आदमी हथियारों से अथवा पत्थर मारता हुआ दिखाई देता है तो भी मृत्यु शीघ्र ही होती है। जिस मनुष्य के नहाने के बाद दिल में दर्द हो जाता है या उसके दांत कटकटाने लगते हैं उसकी भी मृत्यु जल्दी होती है जो मनुष्य रात को इन्द्र धनुष देखता है तथा दिन में तारागणों को देखता है। और अपनी छाया दूसरे की आंखों में देखता है वह मनुष्य भी जल्दी मर जाता है जिन मनुष्यों को कानों से सुनाई नहीं देता तथा नाक टेढ़ी हो जाती है और एक ही आंख से हर समय पानी बहता रहता है, वह भी अधिक नहीं जीवित रहता है। सपने में जो मनुष्य बालों को खोल कर हँस हँसकर गाता हुआ दक्षिण दिशा को जाता हुआ देखता है,

वही मनुष्य जल्दी ही मर जाता है जो मनुष्य सपने में ऊँट या गधे की सवारी पर बैठ कर दक्षिण दिशा को जाता हुआ अपने आप दीखता है वह भी मनुष्य जल्दी ही नष्ट हो जाता है। जिन मनुष्यों को कानों से सुनाई नहीं देता और उनकी आंखें पथरा कर गड्ढे में धँसी हुई मालूम पड़ती हैं वह आदमी जल्दी ही खत्म हो जाता है। जिस मनुष्य पर दिन या रात में स्वप्न में कोई चोट पहुँचाता है और उसके जागने पर वह चोट करने वाला आदमी सामने दीख जाय तो चोटखाने वाला व्यक्ति शीघ्र ही मर जाता है। जो मनुष्य स्वप्न में आग में घुसता है और सपने में ही इस बात को भूल जाता है वह मनुष्य अधिक समय तक जिन्दा नहीं रहता, यदि कोई मनुष्य सपने में सफेद रंग के कपड़े को लाल रंग का या काले रंग का देखता है वह भी शीघ्र नष्ट हो जाता है।

जब मनुष्यों को अपनी मृत्यु का समय आता हुआ मालूम पड़े तो सब दुखों को छोड़कर अनुष्ठान, जप इत्यादि का प्रयत्न करे। उस समय वह मनुष्य पूर्व या उत्तर की तरफ जाकर अच्छे पवित्र भाव से एकाग्र चित होकर (भगवान शिव को प्रणाम करे और आसन लगा कर आचमन करे। अपने सिर और गर्दन को सीधा करके ध्यान करे और किसी भी तरफ नहीं देखना चाहिए जिस प्रकार दीपक एक ही स्थान पर रखा रहता है, हटता नहीं है। उसी तरह सब तरफ से मन हटा कर अच्छे गुणों का, परमेश्वर का ध्यान करना चाहिये। योगी मनुष्य प्राण शरीर, आंख कान, हृदय, मन और मस्तक में धारणा पैदा करे। धर्म और समय को समझ कर और मृत्यु का जप, अनुष्ठान करके योगी मनुष्य बारह या एक सौ आठ धारणा को माथे पर धारण करे। इस प्रकार धारणा करके मनुष्य एक चित्त होकर ध्यान पूर्वक परमेश्वर का भजन करे। ऐसा करने से मनुष्य परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त करता है। अतः उसका नाश नहीं होता वह अमर पद को प्राप्त करता है।

इति श्री वायुमहापुराण का अरिष्ट निरूपण नामका उन्नीसवां अध्याय समाप्त ॥१६॥

बोसवाँ अध्याय

ओंकार प्राप्ति के लक्षण का निरूपण

वायु बोले—हे ऋषियो, इस कथा के बाद हम ओंकार प्राप्ति के लक्षण की कथा का वर्णन करेंगे। यह ओंकार शब्द तीन भागों से मिल कर बना है। और इसका व्यंजन स्वर मिला हुआ है। पहली मात्रा को वैद्युती, दूसरी मात्रा को तामसी और तीसरी मात्रा को अक्षर गामिनी को निर्गुण मानना चाहिए। बहुत कम गान्धार स्वर से बनी गान्धर्वी मात्रा भी होती है। इन चार शब्दों से बना ओंकार शब्द जब मस्तक में लय प्राप्त करता है, तब योगी ओंकार मय हो जाता है। ओंकार धनुष है। आत्मा वाण है और ब्रह्म लक्ष्य है लक्ष्य भेद सावधान होकर करना चाहिए। इसके लिये तन्मयता जरूरी है। ओंकार रूपी एकाक्षर ब्रह्मा बुद्धि रूपी घर में स्थित है। वही परम पद है। ओंकार ही तीनों वेद, तीनों लोक, तीनों अग्नि हैं। यह भगवान वामन के तीनों पैर ऋक्, यजुः और साम है। ओंकार में चार मात्रायें हैं। उस ओंकार में जो योगी तल्लीन रहता है वह मोक्ष पद को प्राप्त करता है। आकार अक्षर है। उपकार स्वर है तथा मकार लुप्त है। इस तरह तीन मात्राओं को मानना चाहिए। अकार भूलोक, उकार भुवः लोक और व्यंजन सहित मकार को स्वरलोक कहते हैं। ओंकार त्रिलोक मय है इसका शिरो भाग स्वर्ग है और पूरा भाग भुवनमय ब्राह्म पद माना गया है। मात्रा पद को रुद्रलोक कहा है। और अमात्रा को शिव पद कहा है। इसी तरह ध्यान पूर्वक उस पद की पूजा करनी चाहिए। और इसीलिये ध्यान में लगे हुये योगी को शाश्वत पद की इच्छा से उस नित्य, अविनाशी और अमात्रा की उपासना करनी चाहिए। इसकी पहली मात्रा ह्रस्व है, दूसरी मात्रा दीर्घ है, और तीसरी मात्रा लुप्त ह। इन मात्राओं को ठीक और शुरू से अन्त तक जाननी चाहिए। जहाँ त: हो वहां तक इनको धारणा करनी चाहिए।

जो योगी मनुष्य इन्द्रिय, मन और बुद्धि का आत्मा में ध्यान करता हुआ अष्ट मात्रा विशिष्ट प्रणव की धारणा करता है। वह मुख्य फल प्राप्त करता है। जितना इसका फल मिलता है उतना फल जो हर महीने अश्वमेध यज्ञ करके सौ वर्षों तक तपस्या करता है उससे भी नहीं मिलता है। जो आदमी कुशा के आगे के भाग से हर महीने जल की बूँदें पीते हैं और सौ वर्ष तक ऐसा करते हैं, उसके उस कर्म के बराबर मात्रा के ज्ञान से फल मिलता है। इष्टापूर्त यज्ञ और सत्य बात का जो फल होता है और एक महीने सिर्फ जल पीकर रहने का जो फल होता है, वही फल मात्रा ज्ञान से प्राप्त होता है। मालिक के लिये लड़ाई में मर जाने वाले वीरों को जो फल मिलता है, वही फल मात्रा ज्ञान से मिलता है। जितना फल मात्रा ज्ञान से मिलता है उतना फल कठिन तपस्या के करने से तथा दक्षिणा, दान करने वाले यज्ञ से भी नही मिलता है। गृहस्थ योगियों के लिये उसकी जो अर्द्ध मात्रा लुप्त है, वही मुख्य बताई गई है। वही लुप्त मात्रा ऐश्वर्य की देने वाली है। योगियों को आठ प्रकार की मुख्य ऐश्वर्य की प्राप्ति उसी से होती है। ब्राह्मणों को उसीकी उपासना करनी चाहिए। अतः इसी तरह उस लुप्त मात्रा से मिलकर जो शान्त, धीर और इन्द्रियों को जीतने वाला योगी अपने को जानता है वह ब्राह्मण सब ज्ञान प्राप्त कर लेता है। ध्यान में लगे ब्राह्मण योग ज्ञान से ही तीनों वेदों और ग्रन्थों को जान जाते हैं। वे सब भूतों के लय स्थान में लीन होकर लयस्थान में ही बदल जाते हैं वे योगी मनुष्य उत्क्रमण विधान से प्राण छोड़कर अविनाशी पद को प्राप्त करता है और यह अजा अपनी ही तरह बहुत सी प्रजा को पैदा करने वाली है एक अज उस अजा से मिलकर सोता है, लेकिन अक्षरों वाली, सोलह पैरों वाली, चार मुखी, बिना शिखा के और एक पर्वत वाली संसार को पैदा करने वाली है। इसके रूप को जानकर विद्वान मनुष्य अमर पद प्राप्त करता है। जो ब्राह्मण प्रभाव को जानते हैं, वह संसार में बार-बार जन्म नहीं लेते हैं। यह ओंकार रूप अक्षर ब्रह्म है।

जो इसका ध्यान पूर्वक मनन करता है वह बन्धनों से छूट कर संसार के मरने जीने से छूट कर मोक्ष, अचल और शिवजी के परमपद को प्राप्त करता है। यह कथा ओंकार प्राप्ति के लक्षण की हमने बताई है।

सब संसार को जानने वाले उस परब्रह्म परमेवर को प्रणाम है। उसी परब्रह्म की पूजा करनी चाहिये। उसी परब्रह्म परमेश्वर की उपासना ही सभी के लिये सुखदाई है। पवित्रों से भी पवित्र अत्यधिक पवित्र ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत मात्रा विशिष्ट ओंकार की ही उपासना करनी चाहिये। हम सर्वात्मा योगीश्वर को प्रणाम करते हैं। सर्वात्मा योगीश्वर को प्रणाम करने से दुख नहीं सताते हैं। जिसने द्युलोक को उन्नत पृथ्वी को मजबूत स्वर्लोक को स्तम्भित और स्वर्ग को आकारा में रखा है, और जो देवों के हृदय स्वरूप हैं, वही परमपुरुष परमात्मा हैं। उनकी कोई उपमा नहीं है। यही ओंकार शब्द विश्वरूपी रुद्र, यज्ञ, वेद इत्यादि में बदल गये हैं। उस योगीश्वर अधिपति को प्रणाम है। सिद्धिकारक रुद्रोपस्थान का सुबह शाम और दोपहर में पाठ करने से शिव सभी इच्छाओं को पूरा करते हैं। जिस प्रकार हवा के हल्के झोके से पका हुआ फल गिर जाता है उसी प्रकार शिव भगवान को प्रणाम करने से सभी दुख दूर होजाते हैं। रुद्र भगवान को प्रणाम करने से सभी कर्मों का फल मिल जाता है जो फल दूसरे देवों के प्रणाम करने से नहीं मिलता है। इसीलिये योगी मनुष्य को तीनों समय श्री भगवान शिव की पूजा करनी चाहिये। वे प्रभु हर समय ओंकार में स्थित हैं। इसी तरह भगवान विष्णु को नमस्कार करना चाहिये। जो मनुष्य नमस्कार करते हैं। वह श्री विष्णु का प्रणाव स्तवन करते हैं यज्ञ प्रणव का, यज्ञ मन का और मन रुद्र का स्तवन करते हैं। इसलिये भगवान रुद्र ही परमपद हैं। इस यतियों की कथा को जो ध्यान पूर्वक सुनता हैं वह परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त करता है॥

इति श्री वायु महापुराण ओंकार प्राप्ति लक्षण नाम्क
बीसवां अध्याय समाप्त॥

इक्कीसवां अध्याय

(कल्प निरूपण)

सूत जी बोले—नैमिषारण्य में रहने वाले श्रेष्ठ तेजस्वी ऋषियों के बीच सावर्णि नाम के एक विद्वान ऋषि रहते थे। अत्यधिक चतुर होने के कारण सब ऋषियों से पहले उन्होंने आदर पूर्वक अत्यन्त शोभायमान वायुजी से सब हित के लिये यह कथा पूछी।

सावर्णि बोले—हे प्रभो आप सर्वदर्शी अन्तरयामी हैं। आपके पुण्य से हम वेद, पुराणों की कथा को अच्छी तरह सुनना चाहते हैं। भगवान हिरण्यगर्भ ने अपने मस्तक से तेजस्वी श्री शिवजी को किस प्रकार पुत्र रूप में पैदा किया कमलयोनि श्री ब्रह्माजी किस प्रकार पैदा हुये। ब्रह्मा नन्दन नील लोहित को रुद्र का स्थान कैसे मिला। रुद्र भगवान के साथ श्री विष्णुजी का अच्छा प्रेम किस प्रकार हुआ। सभी देवता विष्णु मय हैं सभी गण विष्णुमय हैं। श्री विष्णु के बराबर कोई दूसरी चीज नहीं है। देवता हमेशा निष्कपट भाव से ऐसा कहते हैं। फिर भी भगवान विष्णु श्री रुद्र भगवान को क्यों प्रणाम करते हैं।

सूतजी बोले–सावर्णि के इस प्रकार पूछने पर वायु भगवान ने कहा–हे साधु ! आपने अच्छा प्रश्न किया आपको धन्यवाद है। ब्रह्मा जी के पुत्ररूप में भव का जन्म लेना, कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति, शंकर जी का रुद्रपना, विष्णु और शिव दोनों की परस्पर प्रीति तथा विष्णु भगवान शंकर जी को नित्य प्रणाम क्यों करते हैं ? यह सब हम क्रम से विस्तार पूर्वक कहते हैं। सो आप सुनिये–

छटे कल्प के बीतजाने पर मनु के अधिकार काल में सातवां कल्प था। जो पद्म कल्प कहलाता था। इस समय वाराह कल्प चल रहा है। इसको मैं विस्तार से कहता हूँ।

सावर्णि बोले— हे प्रभो, कल्प का प्रमाण क्या है, वह कितने काल का होता है। सो कृपा करके हमारे प्रति वर्णन कीजिये।

वायु बोले — यहां मैं तुमसे सातों मन्वन्तरों की कल्प संख्या यथा-क्रम संक्षेप से कहूंगा। दो हजार आठ सौ करोड़ तथा बासठ करोड़ सत्तर नियुक्त कल्पार्द्ध की संख्या बताई गई है। इसका पूर्त भाग वर्ष परिमाण कहा गया है। एक सौ अठहत्तर करोड़ दो लाख नब्बे नियुक्त के मनुष्यों के वर्ष परिमाण से वैवंस्वत मन्वन्तर हैं। कल्पार्ध का दुगना कल्प होता है। इसी क्रम से सातों कल्पों का परिमाण तथा संख्या यथाक्रम जाननी चाहिए। पांच सौ आठ नियुत, अस्सी सौ नियुत और चौरासी प्रयुत काल तक, सप्तार्षि मनु और इन्द्रादिक देवता काल प्रमाण से यथाक्रम विद्यमान रहते हैं। इस मन्वन्तर के अन्त में मनुष्यों का भी अन्त हो जाता है। प्रणव प्रतिपाद्य देवता साध्य और विश्वेदेवा जो नित्य हैं वे भी कल्पान्त में अन्त को प्राप्त हो जाते हैं। इस बाराह कल्प में जो कि इस समय हैं, इसमें स्वायंभुव आदिक चौदह मनु होते हैं।

ऋषि बोले—यह कल्प बाराह कल्प क्यों कहलाता है तथा किस कारण से भगवान को बाराह कहलाना पड़ा और बाराह कौन थे उन का क्या स्वरूप है यह सब हमसे कहिए यह हमारे जानने की इच्छा है।

वायु बोले—सृष्टि के आदि में भव कल्प था। इस कल्प में स्वयं जानने योग्य आनन्दमय भगवान ही थे। उन्होंने दिव्य ब्रह्म स्थान प्राप्त किया। दूसरा कल्प भुव, तीसरा तप कल्प, चौथा भव कल्प, पांचवां रम्भ कल्प, छटा ऋतु कल्प, सातवां क्रतु कल्प, आठवां लान्ह कल्प, नौवां हव्य वाहन कल्प, दसवां सावित्री कल्प व ग्याहरवां भुवः कल्प व बारहवां उशीक कल्प व तेरहवां कुशिक तथा चौहदवां गान्धार कल्प हुआ। इस चौदहवें कल्प में गान्धर स्वर उत्पन्न हुआ। उसी से नाद और गन्धर्वों की उत्पत्ति हुई। हे ब्राह्मणो पन्द्रहवां कल्प ऋषभ हुआ ऐसा जानिये। इसमें मन को हरण करने वाला ऋषभ स्वर उत्पन्न हुआ। षड्ज नामक सोलहवां कल्प हुआ है।

इसमें छः ऋषि प्रसिद्ध हुये शिशिर वसन्त, निदाघ, वर्षा, शरद, हेमन्त नामक ये छओं ऋषि ब्रह्म के मानस पुत्र थे। तभी षड्ज गम्भीर ध्वनि वाला स्वर भी उत्पन्न हुआ। सत्रहवां कल्प माजीलीय नाम से विख्यात है। अठारहवां कल्प मध्यम कहलाता है। इसमें मध्यम स्वर उत्पन्न हुआ। उन्नीसवां कल्प वैराजक कहलाता है। इसमें ब्रह्मा के पुत्र वैराज मनु हुए। धर्मात्मा दधीचि इनका ही पुत्र था जिसको गायत्री ने स्निग्ध स्वर प्रदान किया था। बीसवां कल्प निषाद कहलाता है। इसमें निषाद को ब्रह्मा जी ने वर प्रदान किया जो कि ब्रह्मा जी की प्रजापति द्वारा सृष्टि कर्म से हाथ रोक लेने पर तपस्या कर रहा था। तभी निषाद स्वर भी उत्पन्न हुआ। इक्कीसवें कल्प को पञ्चम स्वर कहते हैं। इसमें ब्रह्मा जी के प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान नामक पांच पुत्र हुये। इन पांचों महात्माओं ने पंचम स्वर से गाना गाया अतः उस स्निग्ध स्वर का नाम भी पंचम स्वर पड़ा और कल्प भी पंचम कल्प कहलाया।

बाईसवें कल्प का नाम 'मेघवाहन' कल्प समझना चाहिए। इस कल्प में महाबाहु विष्णु भगवान ने मेघ रूपी चर्म के वस्त्र धारण किये हुए महेश्वर भगवान को दिव्य सहस्र वर्ष तक धारण किया था। तेईसवां कल्प 'चिन्तक' नाम वाला था। चौबीसवां आकूति कहलाता है। इसमें प्रजापति ने आकूति सृष्टि करने को कहा था। पच्चीसवें कल्प का नाम विज्ञाप्ति है। सृष्टि करने की इच्छा से ब्रह्मा जी को इसमें शीघ्र ज्ञान हो गया था। इससे इस कल्प का नाम विज्ञाप्ति पड़ा। इसमें देवी विज्ञाति और विज्ञात दो जुड़वां बच्चे भी पैदा हुये छब्बीसवें कल्प को मन कहा है। सत्ताईसवां कल्प भाव कहा जाता है। इसमें शनैः शनैः चंचल मन को रोक कर अग्नि ही काल, रुद्र और सोम हैं। इन वेद मन्त्र का जप करने पर रुद्र लोक की प्राप्ति बताई गई है।

अट्ठाईसवां कल्प वृहत् कहलाता है। प्रजा की इच्छा करते हुये ब्रह्मा जी के अन्तः करण से वृहत् साम और रथन्तर उत्पन्न हुये।

बृहत् के नाम पर तत्व चिन्तक इस कल्प को बृहत् ही कहते हैं। सूर्य मण्डल के रथन्तर का परिमाण ८८ हजार योजन है। इसीलिये सूर्य मण्डल का भेदन करना बड़ा कठिन है। किन्तु योगी लोग उसका तथा बृहत् साम का भी भेदन करके वहां पहुँच जाते हैं। यह हमने आध्यात्म तत्व का निरूपण किया। अब आगे कल्पों का विस्तार से वर्णन करेंगे। अन्त में भगवान नारायण का ध्यान करते हुये कहते हैं कि—

जिह्वे स्तुहि जगत्त्रितयैकनाथं
नारायणं परम कारुणिकं सदैव।
प्राचीन कर्म निगडागल बन्ध मुक्त्यै,
नान्यः पुराण पुरुषादपरोऽस्त्युपायः॥

अर्थात् हे जिह्वे, तू तीनों लोकों के पति, परमकारुणिक, परम पुरुष नारायण भगवान की स्तुति कर। क्योंकि प्राचीन कर्मों की शृंखला के बन्धन से मुक्त करने में उस नारायण भगवान की कृपा के सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

इति श्री वायुमहापुराण का कल्प निरूपण नामक इक्कीसवां अध्याय समाप्त ॥२१॥

---

* बाईसवाँ अध्याय *

(कल्प की संख्या का निरूपण)

ऋषि बोले—हे मुनि आपने कल्पों का अत्यन्त रहस्यमय आख्यान और मंत्रों की कल्पना का आश्चर्यमय वर्णन किया। तीनों लोकों में आप से कोई भी बात अज्ञात नहीं है अतः कृपाकर सब कल्पों की संख्याओं का वर्णन आप विस्तार पूर्वक हम से कहिये।

वायु बोले—अब मैं आप लोगों को कल्प की संख्या तथा परमेष्ठी ब्रह्मा के युग और वर्ष के विषय में वर्णन करूँगा। ब्रह्मा का एक वर्ष एक हजार युग का होता है। इस प्रकार ब्रह्मा के ही आठ

हजार वर्ष बीतने पर उसका एक युग माना जाता है। एक हजार युग प्रजापति का सवन माना गया है दो हजार सवन का एक त्रिलृत्त होता है। ब्रह्मा की स्थिति की यही सब कथा जाननी चाहिए।

इसके आगे उस काल की संख्या को कहता हूं। पहले मैं २८ कल्पों को कहूंगा तथा उनके नाम पड़ने के कारणों को बताऊँगा। रथान्तर और बृहत् साम के बाद के कल्पों का नाम तथा मन्त्र की उत्पत्ति का वर्णन करूँगा।

(अट्ठाईस कल्पों का वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है) अतः उन्तीसवें कल्प का नाम श्वेत लोहित कल्प में ब्रह्मा जी के एक परम तेजस्वी श्वेत उष्णीष (पगड़ी) धारण किये हुये; श्वेत माला और श्वेत वस्त्र पहने हुये, अग्नि के समान कांति वाला एक कुमार उत्पन्न हुआ। उस तेजस्वी, श्वेत लोहित, महारौद्र, धीररूप, श्वेत वर्चस, महामुख वाले कुमार को ब्रह्माने देवदेवेश, विश्वरूप महेश्वर समझा और उसकी वन्दना की। उन्होंने प्रसन्न होकर बड़े जोर से अट्टहास किया जिससे उनके पार्श्व से तेजोमय, श्वेत माला पहिने, श्वेत अंगराग से सुशोभित सुनन्द, नन्दन, विश्वनन्द नामक तेजस्वी ऋषि प्रकट हुये। वे महात्मा श्वेत देव २ के शिष्य हुये। उन सबने सद्योजात महेश्वर की शरण ग्रहण का। हे ब्राह्मणो! जो प्राणायाम परायण होकर योगी लोग उन महेश्वर की शरण में जाते हैं वे सब निष्पाप तेजस्वी और शुद्ध हृदय होकर ब्रह्मलोक को भी पार कर उत्तम रुद्र-लोक को प्राप्त करते हैं।

वायु बोले—इसके बाद तीसवाँ रक्त नामक कल्प कहा गया है। इस कल्प में महान तेजस्वी रक्त ने रक्तवर्ण धारण किया। परमेष्ठी ब्रह्मा पुत्र की कामना कर रहे थे तभी उनके पार्श्व से एक तेजोमय कुमार उत्पन्न हुआ। जो शरीर से रक्तवर्ण का था एक ही नेत्र था। रक्त माला पहन रहा था। सभी वस्त्र भी रक्त वर्ण के थे। उन रक्ताम्बर धारी महादेव को कुमार के रूप में देखकर ब्रह्मा जी ध्यान में मग्न हो गये।

और उन्हें विश्वेश्वर जान कर प्रणाम किया। इस पर महादेव जी ब्रह्मा जी पर प्रसन्न होकर कहने लगे –

हे पितामह ! तुमने पुत्र की कामना से मेरा ध्यान किया है। इसलिये तुम अब प्रत्येक कल्प में मुझ लोक पालक ईश्वर को पहचानोगे। यह कह कर भगवान शर्व ने अट्टहास किया। जिससे उन कुमार के चार पुत्र उत्पन्न हुए जिनका नाम विरज, विबाहु, विशोक, और विश्वभावन था। वे चारों विशुद्ध बुद्धि, ब्रह्मण्य, वीर और अध्यवसायी थे सभी रक्ताम्बर धारी, रक्तमाला, और रक्तलेप से युक्त थे। उनके मुख और नैना भी रक्त थे। इन सबने उन वामदेव भगवान से ज्ञान का अभ्यास किया और उन की स्तुति की। वे लोक हित और शिष्यों को हित दृष्टि से संपूर्ण धर्मों का उपदेश ग्रहण करके स्वयं अव्यक्त रुद्र देव में ही विलीन हो गये।

हे श्रेष्ठ विप्रो, जो भी व्यक्ति भगवान वामदेव का ध्यान करते हैं तथा उनकी शरण में अनन्य भाव से जाते हैं वे सभी शुद्ध, बुद्ध, और निष्पाप होकर सद्लोक को जाते हैं जहां से वे कभी भी लौटते नहीं।

इति श्री वायु महापुराण का कल्प संख्या निरूपण नामका बाईसवां अध्याय समाप्त ॥२२॥

* तेईसवाँ अध्याय *

महेश्वर अवतार योग

वायु बोले—इक्तीसवां कल्प पीतवासा कल्प है। जिसमें महा तेस्वी ब्रह्मा जी पीत वर्ण वाले होते हैं। पुत्र कामना से ध्यान करते समय परमेष्ठी ब्रह्मा जी के एक महातेस्वी पीत वस्त्र धारी पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसके अंगों पर पीत वस्त्र थे तथा पीत चन्दन का लेप लगा हुआ था। कण्ठ में पीत माला सुशोभित थी। पीत यज्ञो पवीत और सिर पर पीत पगड़ी थी। ध्यान पूर्वक ब्रह्मा जी ने उन परमेश्वर लोक पालक प्रभु को पहँचान कर मन ही मन प्रणाम किया। इसके बाद ब्रह्मा ने उन महेश्वर भगवान के मुख से उत्पन्न एक गाय को देखा।

जिसके चार पैर, चार मुख, चार हाथ, चार स्तन, चार नेत्र, चार सींगें चार दांत और मुख थे। वह ईश्वरी चारों ओर मुख वाली बत्तीस लोकों से युक्त थी। सब देवों के पूज्य महादेव उसे देखकर बोले—तुम ही स्मृति बुद्धि और मति हो तुम यहां आओ, यहां आओ। महेश्वर भगवान के ऐसा कहने पर वह देवी उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ी होगई। तब उससे महादेव ने कहा—कि तुम्हारा नाम रुद्राणी होगा, तुम विश्व को अपने वश में करो। तुम्हारे द्वारा ससार में ब्राह्मणों का हित तथा परमार्थ सिद्ध होगा। ऐसा कहकर देवाधिदेव महेश्वर वह गाय पुत्र की कामना वाले ब्रह्मा को दे दी। इससे ब्रह्माजी उस रौद्री गायत्री का ध्यान कर तथा संयम पूर्वक जप करके वैदिकी विद्या गायत्री के द्वारा पुनः महादेव जी की शरण को प्राप्त हुये। तब महादेव जी ने ब्रह्मा को दिव्य योग, ऐश्वर्य, ज्ञान तथा वैराग्य प्रदान किया।

इसके बाद महादेव जी ने भयकर अट्टहास किया। जिससे उनके शरीर से तेजस्वी कुमार उत्पन्न हुये जो कि पीली माला, पीत वस्त्र, पीत अंगराग धारण किये हुये थे। उनके शिर पर पीली पगड़ी थी। उनका मुख और केश भी पीत वर्ण के थे। ये सब कुमार एक हजार वर्ष तक योग विषयक उपदेश देते रहे तथा बाद में रुद्र में ही लीन हो गये।

वायु बोले—ब्रह्म के उस पीत वर्ण नामक कल्प के बीत जाने पर 'सित' नामक दूसरा कल्प हुआ। उस समय दिव्य सहस्र वर्ष तक जगत एक महान जल राशि मय था तब ब्रह्मा दुखी होकर सृष्टि की चिन्ता करने लगे। पुत्र कामना से चिन्ता करने पर परमेष्ठी ब्रह्मा का रंग काला होगया। तब एक कुमार वहां उत्पन्न हुआ। जो कुमार कृष्ण वर्ण महावीर्य तथा तेजस्वी और काले वस्त्र पहने हुये थे। वह कुमार काली पगड़ी और काला यज्ञोपवती धारण किये हुये थे। उनके काला लेपन लगा था तथा काली माला धारण किये हुये थे। ब्रह्माने उन महात्मा को विश्वेश्वर जानकर प्रणाम किया। प्राणायाम परायण महात्मा ब्रह्मा उन यतीश्वर प्रभु की शरण में आये और अघोर मन्त्र से उनका ध्यान

किया। तभी भगवान रुद्र ने घोर अट्टहास किया। तब उनके पार्श्व से कृष्ण वर्ण वाले चार कुमार उत्पन्न हुये। वे सब काले वस्त्र काली पगड़ी, काली माला तथा काला चन्दन लगाये हुये थे। उन कुमारों ने भी अट्टहास किया। और बारम्बार नमः शब्द का उच्चारण किया। उन्होंने भी योग विषयक सहस्र वस्त्र तक परमेश्वर की उपासना की। और ध्यान परायण होकर विश्वश्वर शिव के निर्मल स्थान के प्रवेश कर गये। इस योग विधान के द्वारा जो भी द्विजाति लोग रुद्र का स्मरण करेंगे वे सब शाश्वत पद को प्राप्त करेंगे।

इस कृष्ण कल्प के बीतने पर विश्वरूप नामक कल्प हुआ। स्टष्टि रचना के पुनः आरम्भ होने पर परमेष्ठी ब्रह्मा ने पुत्र कामना से ध्यान किया। उस समय महानाद करती हुई विश्वरूपा सरस्वती प्रकट हुई। तब पितामह ब्रह्माने योग में परायण चित्त से विश्वमाल्य, विश्व-वसनधारी यज्ञोपवीती, विश्व उष्णीष धारी, विश्व गन्धी महानुज सर्व-गामी सर्वेश्वर ईशान देव का मन से ध्यान किया और वन्दना करते हुये कहने लगे हे ईशान तुम्हें मेरा नमस्कार है। तब शिव ने कहा—मैं तुम से प्रसन्न हूँ क्या चाहते हो।

ब्रह्मा जी अत्यन्त प्रसन्न होकर बोले—हे देव, आपके विश्वगामी, विश्वेश्वर रूप को जानने की हमारी इच्छा है। यह परमेश्वर कौन है? यह भगवती कौन है? जो चार मुख चार सींग चार नेत्र चार पैर चार दांत चार स्तन तथा चार हाथ वाली यह विश्वरूपा कौन है? इसका क्या नाम है? इसकी आत्मा और रूप कैसा है। इसका परा-क्रम और कर्म कैसा है? सो बतलाने की कृपा करिये।

महेश्वर बोले--मैं आदि सर्ग के इस रहस्य मय गुह्य तत्व को तुम से कहता हूं सो सुनो। यह तो कल्प है इसको विश्वरूप कल्प कहते हैं। भवादि देवगण इस कल्प के ३६ वें मनु हैं। जग से तुमने ब्रह्म पद को प्राप्त किया है तब से यह तेतीसवां कल्प चल रहा है। आपके सामने ही सैकड़ों हजारों स्वायंभू बीत चुके हैं। आप पहले आनन्द नाम से थे और तपस्या की। गालव्य गोत्र में उत्पन्न होकर आप तपस्या के

बल से मेरे पुत्र हुये। आपमें योग सांख्य, तप विद्या, अविद्या मति धृति शान्ति स्मृति, पुष्टि क्रिया आदि छब्बीस गुण मौजूद थे। इस प्रकृति रूपा महेश्वरी को अपनी प्रसूति जानिये। यह भगवती ही जगत् यानि प्रधान प्रकृति चतुर्मुखी गोरूपा है। तब शिव ने अट्टहास किया। उनके पार्श्व से कई कुमार उत्पन्न हुये। वे कुमार जटी, मुण्डी शिखण्डी और अर्द्ध मुण्डी थे। ये पराक्रमशाली सभी कुमार योगमार्ग से महेश्वर की उपासना करके रुद्र के शरीर में प्रवेश कर गये।

वायु बोले—ब्रह्माजी यह सब सुन अत्यन्त विस्मित हुये। पुनः भक्ति युक्त होकर बोले-कि हे विभो, आप में श्वेत तत्व किस प्रकार आया ? सो कहिये।

भगवान बोले—यह श्वेत कल्प है इसके प्रभाव से ही हम श्वेत हुये हैं। हमारी पगड़ी, माला वस्त्र अस्थि मांस रोम त्वक् रक्त सभी श्वेत हो गये हैं। हमारा नाम श्वेत ही था इससे यह श्वेत कल्प कहलाया। हमारे प्रसाद से इस समय ब्रह्म-नाम वाली गायत्री भी श्वेत वर्ण हैं। जब हम लोहित नाम वाले थे तब कल्प का नाम भी लोहित कल्प था। गोरूपिणी गायत्री भी लोहित थी। फिर जब हमारा शरीर कृष्ण वर्ण का हुआ तब वह कल्प भी कृष्ण कल्प कहलाया। उस समय हम घोर पराक्रम शाली लोक प्रकाशक थे। तब हम अघोर अव्यय और शान्त रूप से विराजमान थे इस भूतल पर हमारा विश्वरूप से सबने दर्शन किया। तब यह कल्प विश्वरूप नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस सावित्री का भी नाम विश्वरूपा हुआ। जो तपस्वी द्विज हमें विश्वरूप में सर्व गामी शिव रूप में देखेंगे वे रज और तमो-गुण से मुक्त होकर रुद्रलोक को प्राप्त होंगे जहां से फिर कोई भी लौटता नहीं। हे द्विजगणो, भगवान रुद्र के इस प्रकार कहने पर पितामह ब्रह्मा ने नम्र होकर कहा—

हे भगवान, आप विश्वरूप धारी हैं। हे महादेव, आपका यह लोक पूज्य शरीर है। कृपया हमको जानने की इच्छा है कि कब किस काल में द्विजातिगण आपको देख सकेंगे, और किस तत्व से किस मूर्ति का ध्यान करके आपका दर्शन लाभ कर सकते हैं।

भगवान बोले--हे ब्रह्मन, तपस्या, योग, दान, तीर्थ दक्षिणा यज्ञ आदि के द्वारा नहीं बल्कि ध्यान के द्वारा हमें आप देख सकते हैं। त्रिभुवन पति विष्णु ही एक मात्र साधनीय हैं। वे वाराह नाम से प्रसिद्ध होंगे। चारों युग उनके चार पाद होंगे। यज्ञ उनके अंग, चार वेद, चार भुजायें, ऋतु सन्धि उनके मुख दोनों अयन उनकी आंखें पर्व आदि हैं उत्पत्ति प्रलप उनक आश्रम हैं। वे नारायण ब्रह्म लोक वासियों के लिये भी नमस्कार करने योग्य हैं। जब संसार एक जलके समुद्र में लीन हो जायगा उसके बाद आप विष्णु भगवान की नाभी से उत्पन्न होंगे और ख्याति प्राप्त करोगे। प्रभु के सप्तम वाराह कल्प में विष्णु महातेजस्वी काल होकर संसार का संहार करेंगे। तब तुम्हारे वैवस्त मनु आपके पुत्र होंगे। उस समय शिखा युक्त श्वेत नामक महा-मुनि होंगे। हिमालय के छागल पर्वत पर हमारे श्वेत, श्वेतशिखिर, श्वेतश्व और श्वेत लोहित चार शिष्य होंगे। वे चारों महात्मा वेद पारग और ध्यान परायण होंगे।

जब द्वितीय द्वापर युग में प्रभु पजापति देव २ 'सत्य' व्यास नाम से प्रकट होंगे तब हम संसार के कल्याण के लिये सुतार नाम से प्रकट होंगे। उस समय हमारे दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक, केतुमान चार पुत्र होंगे। वे योग ध्यान परायण होकर रुद्र लोक में गमन करेंगे।

तीसरे द्वापर में भार्गव व्यास नाम से प्रकट होंगे, तब उस युग के अन्त में दमन के नाम से पुकारे जायेंगे। उस समय भी चार पुत्र होंगे जिनके नाम विशोक, विकेश विशाप और शापनाशन होंगे।

चौथे द्वापर में प्रभु प्रजापति देव २ सत्य व्यास अंगिरा के नाम से प्रकट होंगे तब हमारा सुहोत्री नाम कहलायेगा। उस समय भी हमारे सुमुख दुर्मुख दुर्दम और दुरतिक्रम नाम के चार पुत्र पैदा होंगे।

पांचवे द्वापर में व्यास सविता के नाम से प्रकट होंगे, जब हम कङ्क के नाम से तेजस्वी ऋषि कहलायेंगे। उस समय भी चार पुत्र होंगे जिनके नाम सनक, सनन्दन सनातन और सनत्कुमार होंगे।

छटे द्वापर में व्यास जी 'मृत्यु' नाम से प्रकट होंगे तब हम लोकक्षि

के नाम से मशहूर होंगे। उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे वे चारों महातेजस्वी और योगात्मा हैं।

सातवें द्वापर में महाप्रतापी विभु 'शतक्रतु' होंगे तब हम उस काल में तेजस्वी जैगिषव्य के नाम से प्रसिद्ध होंगे। उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे, वे महातेस्वी ध्यान योग में लिप्त होकर रुद्रलोक को जायेंगे।

आठवें द्वापर में व्यास जी 'वशिष्ठ' नाम से प्रकट होंगे, उस समय भी उनके चार पुत्र होंगे। वे चारों महातेजस्वी श्री माहेश्वर योग को प्राप्त करके हमारे पास आजायेंगे।

नवें द्वापर में 'सारस्वत' नाम के व्यास जी प्रकट होंगे उस समय हम ऋषभ नाम से प्रसिद्ध होंगे।

दसवें द्वापर में व्यास जी 'त्रिधामा' रूप में प्रकट होंगे, उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे ये भी निष्पाप होकर श्री रुद्र लोक में निवास करेंगे।

ग्यारहवें द्वापर में व्यासजी 'तिष्ठत' नाम से प्रकट होंगे, उस समय हम कलियुग के समय गंगाद्वार में होंगे। उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे जो चारों ही उत्तम गति को प्राप्त कर के रुद्रलोक में स्थिति होंगे।

बारहवें द्वापर में सत्यदेव व्यास जी 'शततेजा' के नाम से प्रकट होंगे उस युग में हम अत्रि नाम से प्रसिद्ध होंगे और पृथ्वी में हैमक वन में जाकर तपस्या करेंगे।

तेरहवे द्वापर में नारायण धर्म के नाम से व्यास रूप में प्रकट होंगे उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे तब हम बालि नामक महामनि से प्रसिद्ध होंगे।

चौदहवे द्वापर में 'सुरक्ष' नाम के व्यास होंगे तब हम युग के अन्त में अंगिरा ऋषि के वंश में गौतम जी के नाम से प्रसिद्ध होंगे। तब से हमारा आश्रम गोतमाश्रम के नाम से प्रसिद्ध होगा।

पन्द्रहवे द्वापर में प्रभु प्रजापति व्यास 'अरुणि' नाम से प्रकट होंगे। तब हम वेदशिरा नाम से प्रसिद्ध होंगे। और वहीं सरस्वती

नदी के किनारे पर हिमालय पर्वत के पहले भाग में आश्रम बनाकर रहेंगे।

सोलहवे द्वापर में व्यास जी संजय के रूप में प्रकट होंगे। तब हम गोकर्ण के नाम से प्रसिद्ध होंगे। इसीलिये उस वन का नाम गोकर्ण वन पड़ेगा उस समय भी चार पुत्र होंगे और सभी चारों परम पद को प्राप्त होंगे।

सत्रहवे दापर में व्यास जी 'कृतञ्जय' नाम से प्रकट होंगे उस समय हम गुहावासी रूप से प्रसिद्ध होंगे। हिमालय के ऊंचे पर्वत पर महा-पुण्य सिद्धक्षेत्र स्थित होगा। उस समय भी हमारे चार पुत्र होंगे और वे चारों ही ध्यान में लीन होकर योग सधना के दुवारा शिवलोक को प्राप्त होते हैं।

अठारहवे दुवापर में महामुनि व्यास तव ऋतञ्जय के नाम से प्रकट होंगे। और हम शिखण्डी के नाम से प्रसद्धि होंगे तब भी चार ही पुत्र होंगें।

उन्नीसवे द्वापर में भारद्वाज नाम के महामुनि व्यास जी प्रकट होंगे। तब भी चार ही पुत्र होंगे। और हम जटामाली नाम से प्रसिद्ध होंगे।

बीसवें द्वापर में प्रभु व्यास जी वाचः श्रवा नाम से प्रकट होंगे और हमारा नाम अट्टहास पड़ेगा। हिमालय पर्वत के मुख्य भाग पर अट्टहास नाम का विशाल पर्वत है। वहां भी चार पुत्र होंगे जो चारों ही माहेश्वर योग के द्वारा रुद्रलोक में जाते हैं।

इक्कीसवे द्वापर में व्यास जी ऋषि सप्तम वाचस्पति नाम से प्रकट होंगे। उस समय हम दारुव नाम से प्रसिद्ध होंगे। अतः इसी कारण से उस विशाल वन का नाम देवदारु वन पड़ेगा।

बाइसवे द्वापर में शुक्लायन व्यास नाम से प्रकट होंगे तब हम वराणासी में ऋषियों के नाम से प्रसिद्ध होंगे और हमारा नाम लाङ्गली पड़ेगा।

तेइसवे द्वापर में व्याम तृणविन्दु नाम से प्रकट होंगे। और फिर हम श्वेत महाकाय सुधामिक मुनिपुत्र नाम से प्रसिद्ध होंगे।

चौवीसवे द्वापर में व्यास ऋक्ष नाम से प्रकट होंगे।

पच्चीसवे द्वापर में व्यास वशिष्ठ 'शक्ति' नाम से प्रकट होंगे और तब हम दण्डी मुण्डीश्वर होकर देवों के पूजे हुये कोटि वर्ष नगर में प्रसिद्ध होंगे।

छब्बीसवे द्वापर में व्यास जी पाराशर रूप में प्रकट होंगे। और जब हम सहिष्णु के नाम से प्रसिद्ध होंगे। कलियुग के शुरू में हम रुद्रवन में स्थिति होंगे।

सत्ताइसवे द्वापर से व्यास जी 'जातुकर्ण्य' नाम से प्रकट होंगे और जब हम ब्राह्मणों में श्रेष्ठ सोमशर्मा के नाम से प्रसद्धि होंगे। और प्रभास क्षेत्र में आश्रम बनाकर निवास करेंगे और योगात्मा नाम से प्रसिद्ध होंगे।

अठाइसवे द्वापर में प्रभु प्रजापति पराशर के पुत्र श्रीकृष्ण दैपायन व्यास के नाम से प्रकट होंगे। उस समय भी चार पुत्र होंगे। उस समय यदुकुल में श्रेष्ठ श्री भगवान लीला पुरुषोत्तम कृष्ण छठे अंश से वासुदेव के रूप में वसुदेव से प्रकट होंगे। उस समय हम योगात्मा होकर योगमाया द्वारा ब्रह्मचारी रूप में प्रकट होंगे। और जब हम ब्राह्मणों के फायदे के लिये योगमाया के वल से विष्णु मेरुगुहा में प्रकट होंगे। और तब हे प्रजापति ब्रह्माजी उस समय हम नकुली नाम से प्रसिद्ध होंगे। जब तक यह पृथ्वी स्थिति रहेगी, तभी तक हमारे द्वारा बने स्थान कायारोहण नाम से प्रसिद्ध होंगे। वे चारों पुत्र योगात्मा, महातेजस्वी और वेदों को जानने वाले विद्वान होंगे। ये ऊर्द्धरेता महेश्वर योग के द्वारा रुद्रलोक में निवास करेंगे। इस प्रकार इस कथा में हमने अठाईस व्यासों के अवतारों की कथा का वर्णन किया है।

इति श्री वायुमहापुराण का माहेश्वर अवतार योग नामक
तेइसवां अध्याय समाप्त ॥२१॥

———

* चौबीसवाँ अध्याय *

(शार्वस्तव)

वायु बोले-ऋषियों ने बतलाया है कि हमारे भारत में चार युग 'सत्ययुग, त्रेता युग, द्वापर युग और कलियुग' होते हैं। ब्रह्माजी के एक दिन में हजार युगों का समय होता है इस ब्रह्माजी के दिन में यम सातोंगण और चौदहगण मनुष्य लोक में शरीर धारण करते हैं। और फिर चारों युगों के दिशा होने पर वे देवता पहले मनुष्य लोक और तपो लोक को जाते हैं। मन्वन्तरों के लुप्त होने पर देवता भी आवागमन में रहते हैं और फिर चौदहगण अपने दूसरे देवगणों के साथ सत्यलोक को छोड़कर मनुष्य लोक में जन्म लेते हैं। उस समय सब भूतादि नष्ट होजाते हैं। सब भुवादि लोक शून्य होजाते हैं और कल्प वासियों के साथ देवता ऊपर चले जाते हैं वर्षा और अग्नि से युग क्षीण होजाता है। उस समय ब्रह्माजी सब का नाश करके देवता राक्षसों और ऋषियों की फिर दुबारा सृष्टि पैदा करते हैं। सप्तम कल्प में सातों सागर मिलकर एक हो जाते हैं। और अन्धकार हो जाता है। उस एकार्णव में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करने वाले श्री कमल नयन, मुकुट से शोभित श्रीपति नारायण के मुख से पैदा आठों पुरुषोत्तम, अष्टबाहु, लोकसमूह के पैदा होने के स्थान योगात्मा हरि की माया से किसी अन्य योग को धारण करके श्री नागराज के हजारों विशाल फनों की शैया पर सोते हैं। परब्रह्म परमात्मा भगवान विष्णु ने सोते हुये ही आश्चर्यवश अपनी नाभि से एक कमल को पैदा किया। उस कमल की लम्बाई चौड़ाई सौ योजन की थी, और वह बाल सूर्य (निकलते हुये सूर्य) की तरह तेजवान था। वह भगवान विष्णु की लीला से पैदा होने वाला वज्र की तरह दराड़ वाला था। भगवान विष्णु उस कमल से खेल रहे थे। तभी प्रजापति ब्रह्माजी उनके पास ही स्वर्णमय ब्रह्माण्ड से पैदा हुये और स्वर्ण के समान शरीर की कान्तिवाले चार मुख वाले ब्रह्माजी उनको ढूँढते हुये अपनी

इच्छा से वहीं आगये श्री भगवान विष्णु को सुगन्धित नवीन फूल से खेलते हुये देखकर ब्रह्माजी उनके पास पहुँच गये। और उनके पास पहुँच ब्रह्माजी आश्चर्य पूर्वक देखकर कहने लगे कि 'आप कौन हैं जो इस जल में सो रहे हैं।'

प्रजापति ब्रह्माजी की बात को सुनकर श्री भगवान विष्णु आश्चर्यमय होकर अपनी शैय्या से उठ बैठे। और कहने लगे जो पृथ्वी, आकाश, स्वयं, कार्य आदि जो भी कुछ हैं उन सबका मालिक मैं ही मैं हूँ मैं ही सबसे श्रेष्ठ परमपद हूँ और अब आप बताइये कि आप कौन हैं और कहां से यहां पर आये हैं और अब आप कहां जायेंगे। आपका कौनसा स्थान है सारे संसार को पैदा करने वाले आप कौन है तथा हम आपका कौन सा प्रिय कार्य करें। भगवान श्री विष्णु जी के इस तरह पूछने पर प्रजापति ब्रह्माजी बोले।

जिस प्रकार आप विश्वकर्त्ता सर्वात्मा हैं उसी प्रकार मैं भी सब कार्य को करने वाला सर्वात्मा हूं मेरा नाम नारायण है। प्रजापति ब्रह्माजी के मुख से यह बात सुनकर श्रीपति भगवान विष्णु अधिक आश्चर्यमय हो गये और उनसे आज्ञा लेकर योगीश्वर विष्णु ब्रह्माजी के मुख में अन्तर्ध्यान होगये। ब्रह्माजी के मुख में घुस कर श्री विष्णु जी ने सागर, पर्वतों के साथ आठों द्वीप ब्रह्माजी से लेकर स्तम्ब पर्यन्त चारों आश्रमों में अलग सातों सनातन लोक देखे और देखकर अपने आप ही कहने लगे कि ब्रह्माजी की तपस्या अद्भुत है।

श्री भगवान विष्णु उन तरह तरह के आश्रमों में डालने लगे, लेकिन हजारों वर्षों के बीतजाने पर भी उन्होंने अन्त नहीं देखा तब भगवान विष्णु प्रजापति ब्रह्माजी के मुख में से निकल कर बोले कि हे प्रभो आपके उदर का शुक्र, अन्त मध्य, काल, दिशा का कुछ भी पता नहीं चलता। भगवान विष्णु जी ने फिर प्रजापति ब्रह्माजी से कहा कि हे भगवान अब आप हमारे मुख में घुसकर शाश्वत उदर में अनुपम लोकों को देखिये। प्रजापति ब्रह्माजी शुभ वचनों को सुनकर भगवान विष्णु जी को नमस्कार करके उनके मुख में घुस गये।

प्रजापति ब्रह्माजी ने श्रीविष्णु जी के उदर में उन्ही लोकों को देखा और उनका अन्त भी कहीं नहीं मिला। जब विष्णु ने जी अपने अन्दर आया समझकर अपने सब इन्द्रियों के द्वारों को बन्द कर लिया और जब ब्रह्माजी ने सब द्वारों को बन्द देखा तो श्री विष्णु जी के नाभि में से कमलनाल के सहारे प्रकट हुये। उस समय प्रजापति ब्रह्मा जी पद्मगर्भ के समान तेजवान होकर कमल में बैठ गये। इसी तरह वे दोनों आपस में उस जल में क्रीड़ा करने लगे।

सूतजी बोले—जिस जगह पर श्रीपति विष्णु जी विराजमान थे उसी समय श्री महादेव जी भी वहां पर आये। वे बहुत जल्दी २ पैरों को जमीन में मार रहे थे, जिनके शोर से जल कीटाणु आकाश में इधर उधर उड़ने लगे और हवा भी बहुत तेज चलने लगी यह देखकर ब्रह्माजी को बहुत अचम्भा हुआ और श्री विष्णु जी से कहने लगे कि जल विन्दु स्थूल और भी गर्म होगये हैं जिससे यह कमल कांप रहा है। ये आप क्या करना चाहते हैं हमें बड़ा आश्चर्य होरहा है। प्रजापति ब्रह्मा जी की ऐसी वाणी सुनकर श्रीविष्णु भगवान बोले क्या मेरी नाभि में कोई दूसरा जीव आश्रय लेरहा है। प्रजापति ब्रह्माजी मैंने आपके साथ बुरा बर्ताव किया है फिर भी आपने हमारे प्रति अच्छा वर्त्ताव किया है। और फिर मन में ध्यान लगाकर बोले कि आपको इस कमल के विषय में भ्रम हो रहा है। हे प्रभो मैंने क्या किया है जिससे कि आप मुझसे ऐसे सुन्दर और प्रिय वचन कह रहे हैं यह आप मुझको बताइये। श्रीपति वैकुण्ठ निवासी के इस प्रकार कहने पर प्रजापति ब्रह्माजी ने कहा कि हे दीन वन्धु, सबसे पहले मैंने ही आपके उदर में प्रवेश किया था और जिस तरह आपने हमारे उदर में देखा उसी तरह हम ने भी आपके उदर सम्पूर्ण लोकों को देखा। हे प्रभो, हजारों वर्ष घूमने के बाद हम बाहर आने लगे, तो आपने अपने सब इन्द्रिय द्वारों को बन्द कर लिया था आप हम को अपने वश में करना चाहते थे। लेकिन फिर हम आपकी नाभि में से कमलनाल के द्वारा बाहर निकल आये। हे प्रभो आपको इससे तीनक भी दुख नहीं पहुँचेगा। कार्यों की

आपस में इसी तरह की स्वाभाविक गति होती है।

विष्णु जी बोले–हे ब्रह्माजी हमने आपके प्रति जो बुरा वर्त्ताव किया है और हमसे आपके विषय में जो कार्य हुआ है। वह सब आश्चर्यमय है हमने आपको खेल २ में ही बांधना चाहा था और तब अपनी इच्छा से सब इन्द्रिय द्वारों को बन्द कर लिया। आप इस हमारी बात का बुरा न मानें। आप हमारे सबके बड़े और पूज्य ने योग्य हो, हमने आपके साथ जो व्यवहार किया है उसे आप क्षमा करदें। और भगवान आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप इस कमल से उतर जायें, क्यों कि आपका भार हमसे सहन नहीं हो सकता।

ब्रह्माजी बोले–हे वैकुण्ठपति भगवान विष्णु जी आप कोई वर मांगिये मैं इस कमल से उतर रहा हूँ।

विष्णुजी बोले–हे प्रजापति, ब्रह्माजी, आप हमारे पुत्र बनें यही हमारी इच्छा है, इस कार्य में आपका यश बढेगा और आप सुखी होंगे। आप सबसे पूज्य हैं और माननीय हैं आप सब जगह विद्यमान हैं आज से आपके सिर पर सफेद पगड़ी शोभित होगी और आपका पद्मयोनि नाम भी आज से पड़ेगा। हे प्रभु आप हमारे पुत्र बनें।

श्रीपति भगवान विष्णु के इस वर को ब्रह्माजी ने मान लिया और अत्यन्त खुश होकर उन्होंने मात्सर्य भी छोड़ दिया और बोले कि ऐसा ही होगा। इसके बाद निकलते हुये सूर्य के समान अति कान्तिमान किसी विशाल मुखवाले जीव को अपनी ओर आते देख कर भगवान विष्णु से पूछने लगे कि–हे प्रभो यह विशाल मुख वाला कौन पुरुष है मैं इसको नहीं जानता हूं कि यह कौन है जिनके बाल इधर उधर फैल रहे हैं जो त्रिशूलधारी, दश भुजा वाले बाघम्बर पहने हुआ विकृत आकृति, जिनका लिंग ऊपर की तरफ उठा हुआ है और भयंकर गर्जना करते हैं विष्णु यह दीप्तिमान पुरुष कौन हैं जो अपने तेज से चारों दिशाओं को और आकाश को ढकते हुये इधर ही आरहे हैं। प्रजापति ब्रह्माजी की ऐसी बातों को सुनकर श्री भगवान विष्णु बोले ये भगवान शिव हैं।

श्री विष्णु जी के ऐसे बचनों को सुनकर प्रजापति ब्रह्माजी नाराज हो गये और श्रीपति भगवान विष्णु से कहने लगे कि आप अपने को लोक कर्त्ता नहीं समझते और सृष्टि पालक ब्रह्माजी को भी नहीं समझते। यह शिवजी कौन है जो हम दोनों से बड़ा है।

प्रजापति श्रीब्रह्माजी की बातों को सुनकर श्रीविष्णु भगवान बोले कि हे प्रभो आप शिव भगवान के प्रति ऐसी अपमान जनक बातें नहीं करें, ये मायाईश योगेश्वर धर्मरूप हैं। ये इस संसार के कारण अव्यय पुराण पुरुष हैं। जीवों का संहार कर्त्ता भगवान शिव ये ही हैं।

स्वयं शंकर भगवान ही बालकों की तरह संसार से खेला करते हैं। इस लोक की सृष्टि करने वाले शिव के प्रधान, अव्यय, ज्योति, अव्यक्त, तम और प्रकृति आदि नित्य नाम हैं दुख से दुखी योगा मनुष्य इन्ही शिव भगवान को ढूढ़ते फिरते हैं कहते हैं वह कहां है। ये बीज बोने वाले बीजी हैं। आप बीज हैं और मैं स्वयं विष्णु सना-तन योनि हूँ।

बोले—आप योनि हैं, मैं बीज हूँ और भगवान शिव बीज बोने वाले बीजी कैसे हैं आप मेरे इस भ्रम को दूर करिये।

सब संसार की सृष्टि करने वाले प्रजापति ब्रह्माजी लोकसृष्टि सम्गंन्धी सब बातों को जानकर भी भ्रम सहित प्रश्न भगवान विष्णु से पूँछा और तब भगवान विष्णु ने कहा कि ये महेश्वर सब भूतों से महान हैं और उन महेश्वर से बढ़कर दूसरा कोई भूत नहीं है। ये दो रूपों से आत्मा में घुसे स्थिति हैं, ये दो रूप से निष्कल सूक्ष्म, अव्यक्त हैं। और दूसरे रूप में सकल और महेश्वर हैं। इन महेश्वर का पूर्व काल में एक लिंग सर्ग के लिये ब्रह्म रूपी बीज के सहित प्रकट हुआ है। और समय के अनुसार वह बीज मुझ सनातन योनि में प्रवेश हुआ। और उस योनि में वह बीज विशाल सोने के समान रूप वाला अण्ड के रूप में बदल जाता है।

वह अण्ड एक हजार वर्ष तक जल में स्थित रहा। वायु के द्वारा हजारों वर्षों में वह दो भागों अलग होगया। उसके एक भाग से पृथ्वी और दूसरे से स्वर्ग उत्पन्न हुआ फिर उसमें से हिरण्यगर्भ ब्रह्मा और विष्णु प्रकट हुये। अतीत कल्प में आपके कुछ कुमार उत्पन्न हुये उनमें सनत कुमार, ऋतु, अर्द्धरता, सनातन, सनक, सनन्दन आदि प्रकट हुये इन सब ने उत्पन्न होकर कहा हम तीनों प्रकार के ताप से अलग रह कर आत्मज्ञ बनेंगे तथा कोई कार्य नहीं करेंगे। क्योंकि पुनर्जन्म गोरखधन्धा है। तब आप शंकर की माया से मोहित हुये हे महाबल! इस रहस्य को समझकर आप उठिये अब हम दोनों शंकर जी की स्तुति करेंगे—

सूतजी बोले–इस प्रकार ब्रह्मा जी को आगे करके गरुड़ध्वज विष्णु भगवान शंकर जी की निम्नप्रकार स्तुति करने लग—

हे भगवान आप सुव्रत और अनन्त तेजवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप क्षेत्रपति और वीजी है और हे शूल धारण करने वाले प्रभो आपको नमस्कार है। आप लिंगरहित, ऊर्ध्व लिंग तथा वैकुण्ठरेता हो, आपको नमस्कार है। आप हव्य पूज्य, और रुद्योजात हैं आपको नमस्कार है। आप हम भूतों के प्रभव और वेद कर्मा के समान शुभ द्रव्यों के पभु हैं। आप योग संख्य के प्रभु व जनक हैं। आप ग्रह और नक्षत्रों के प्रभु हैं। आपको नमस्कार है। हे प्रभो आप हमारे सर्वत्र कल्याण करने वाले हैं। आप जो हैं वही हैं। आप अज्ञेय और अप्राप्य हैं। आपको नमस्कार है। इस प्रकार महान स्तव से द्रार्थना की।

इति श्री वायु महापुराण चौबीसवां अध्याय समाप्त ॥२४॥

❋ पच्चीसवाँ अध्याय ❋

(मधु कैटभ की उत्पत्ति और विनाश)

सूतजी बोले–ऊपर किये गये महास्त्रोत्र को सुनकर पिनाकी विरूपाक्ष, दक्ष यज्ञ विनाशक त्रिलोचन बहुत प्रसन्न हुये वे पहले तो

इस प्रकार क्रोधित हो रहे थे मानो उन दोनों देवों को पी जायेंगे। परन्तु वे उन दोनों देवों की स्तुति को सुनकर सब जानते हुये भी अज्ञान पूर्वक बोले-कमल केसे नेत्र वाले आप दोनों कौन हैं ? जो इस घोर प्रलय के समुद्र में यहां प्रकट हुये हो। यह सुनकर वे दोनों बोले-हे विभो ! आप सब कुछ जानते हुये भी इस प्रकार क्यों पूछ रहे हो आपके बिना हम कहां पर सुख की आशा करें। यह सुनकर श्रीशंकर भगवान प्रसन्न होकर मधुर वाणी से बोले-हे हिरण्यगर्भ, हे कृष्ण, मैं तुम दोनों की नित्य अक्षरों से युक्त इस भक्ति से परम प्रसन्न हूं। आप दोनों पूज्य और मान्य हो आपको मैं क्या वरदान दूँ।

शिव की ऐसी बातें सुनकर विष्णु भगवान ने ब्रह्मा जी से कहा हे महाभाग ? जो अभीष्ट हो वर आप मांग लो। इस पर ब्रह्मा जी बोले हे विष्णो ! मुझे पुत्र की इच्छा है जो मेरे भार को हल्का कर दे विष्णु ने इस पर कहा-कि तुम यदि वीर धुरन्धर पुत्र चाहते हो तो भगवान शंकर जी को ही अपना पुत्र बनने की कहो। यह बात मान-कर विष्णु भगवान के कहने पर ब्रह्मा जी हाथ जोड़कर ईशान, वरदाता रुद्र से कहने लगे हे विश्वात्मन, आप मुझे अपने समान धुरन्धर कार्य-क्षम पुत्र का वरदान दीजिये। आपके प्रसन्न होने पर मैं दूसरा वरदान नहीं चाहता। आप प्रसन्न होइये।

भग के नेत्र को फोड़न वाले भगवान रुद्र ने ब्रह्मा की उस प्रार्थना को सुनकर स्पष्ट शब्दों में कहा-ऐसा ही होगा। हे सुव्रत, जब किसी काम के करते समय जब तुम्हें क्रोध होगा उस समय एकादश रुद्र प्रकट होंगे जो मेरे ही रूप हैं। उनके रूप में तुम्हारे ललाट से उत्पन्न होऊँगा फिर प्रसन्न होकर विष्णु से भगवान रुद्र ने वरदान मांगनें को कहा इस पर विष्णु ने कहा-हे देव ! यदि मेरे ऊपर आप प्रसन्न हैं तो हे मेघवाहन ! मेरी आप में अविचल भक्ति हो। श्रीशंकर जी ये सुनकर पुनः केशव से बोले-हे विष्णो ! सुनो मेरी आप पर जो प्रीति है उसे सुनिये। यह सारा विश्व स्थावर जंगम अथवा अप्रकाश सब कुछ रुद्र और नारायण रूप ही हैं। मैं अग्नि हूँ तुम सोम हो, तुम रात हो तो मैं दिन हूँ। तुम ऋत हो तो मैं सत्य हूँ। तुम यज्ञ हो तो मैं फल हूँ। तुम

ज्ञान हो तो मैं ज्ञेय हूँ। पुण्य करने वाले लोग तुम्हारा जप करके मुझ में प्रवेश हो जाते हैं। युगों के अन्त होने पर उनका हम दोनों के अलावा कोई गति नहीं है तुम अ ने को प्रकृति समझो और मुझ को पुरुष रूप शिव। तुम मेरे आधा शरीर हो और मैं तुम्हारा आधा शरीर हूँ। तुम में श्री वत्स पद लक्षण श्यामल वाम पार्श्व हो और मैं नील लोहित दक्षिण पार्श्व हूँ। हे विष्णो! तुम मेरे हृदय हो तथा मैं तुम्हरे हृदय में स्थित हूँ तुम सभी कार्य के कर्ता तथा मैं अधिष्ठान देवता हूं। हे वत्स, ह जलदाभ तुम्हारा कल्याण हो। अब मैं जाता हूँ।

यह कहकर देवाधिदेव महादेवजी अन्तर्ध्यान हो गये। प्रसन्न होकर विष्णु भगवान भी जल में शयन करने लगे और पदमें जन्मा ब्रह्मा जी भी पद्म के आसन पर विराजमान हो गये।

इस के कुछ समय बाद वहाँ पर दो अतुलनीय बलशाली मधुकैटभ नामक दो भ्राताओं ने तरुण सूर्य के समान चमकने वाले उस पद्म को बड़े जोर से पकड़ कर हिलाने लगे। उन दोनों की आंखे उस घोर अंधकार में चमक रही थीं। वे दोनों वीर हँस हँस कर निडर हुये उन कमल पत्नों को तोड़ रहे थे। उन दोनों राक्षसों ने ब्रह्मा से कहा - 'तुम हमारे भक्ष्य होइये" ब्रह्मा जी इस रहस्य को जानने कमलनाल के सहारे रसातल में उतरे। वहाँ विष्णु भगवान को कृष्णजिन तथा उत्तरीय धारण किये हुये देखा। उन्होंने शयन करते हुये विष्णु भगवान को जगाया। जगाने पर विष्णु भगवान से कहा हे प्रभो मुझे भूतों से भय है, आप उठिये हमें, बचाइये, हमारा कल्याण करो।

शत्रुदमन भगवान हँसते हुये बोले कोई चिन्ता नहीं तुम डरो मत। उन दैत्यों का आप "भूत आदि वाक्यों से ही विनाश कर देंगे। इसके बाद भगवान ने विष्णु और जिष्णु नामक दो भ्राताओं को उत्पन्न-किया और उनसे कहा तुम दोनों ब्रह्मा जी की रक्षा करो। इधर मधुकैटभ दैत्यों ने यह सब जानकर विष्णु जिष्णुका रूप धारण किया और ब्रह्मा के पास आकर बोले - हम दोनों परस्पर युद्ध करते हैं। बीच में तुम निर्णायक बनो। उन दोनों ने जल में प्रवेश करके जल को स्तब्ध